देसहरियाणा
ISSN : 2454-6874
साहित्यिक-सांस्कृतिक अभिव्यक्ति का मंच
अंक 46-47 मई-अगस्त, 2023

संपादक	सुभाष सैनी
सह-संपादक	अरुण कैहरबा
सम्पादन सहयोग	जयपाल, कृष्ण कुमार, राजकुमार जांगड़ा, विकास साल्याण
सलाहकार	प्रो. टी.आर. कुंडू, सुरेन्द्रपाल सिंह, परमानंद शास्त्री,
	अशोक भाटिया, सत्यवीर नाहड़िया
प्रबंधन	कीर्ति सैनी, योगेश शर्मा, गुरदीप भोंसले
प्रकाशक	सत्यशोधक फाउंडेशन, 912 सैक्टर-13, कुरुक्षेत्र हरियाणा
संपर्क	सुभाष चंद्र - 94164-82156
	विकास साल्याण - 90501-82156
Email	haryanades@gmail.com
Website	desharyana.in
सहयोग राशि	एक प्रति ₹ 50 मात्र
व्यक्तिगत:	₹300 (वार्षिक) संस्था:₹500 (वार्षिक)
	(पंजीकृत डाक खर्च समेत)
आजीवन:	₹5000 संरक्षक: ₹10000

ऑनलाईन भुगतान के लिए

Account Name	Satyashodhak Foundation
Bank Name	Indian Bank, Sector -13
Account No.	50490177180
IFSC:	IDIB000K849

प्रकाशित रचनाओं में प्रस्तुत विचार एवं दृष्टिकोण से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं।
सम्पादक एवं संचालन अव्यवसायिक एवं अवैतनिक, समस्त कानूनी विवादों का न्याय-क्षेत्र कुरुक्षेत्र न्यायालय होगा।

अनुक्रम

संपादकीय

जातिगत जनगणना समता-स्वतंत्रता-बंधुता व न्यायपूर्ण ... 03

कहानी

मोपासां (अनुवाद - भगवान दास, मनप्रीत, मुलख सिंह) - ख़ुदकुशियां 05

ग़ज़ल

मनजीत भोला 10

विरासत

राजकुमार जांगड़ा - 1857 की क्रांति में हांसी का योगदान 11

राजकुमार जांगड़ा - हांसी-हिसार के स्वतंत्रता सेनानीः संक्षिप्त परिचय 21

गगनदीप सिंह - साढ़ौरा के पीर बुद्धु शाह और गुरु गोबिंद सिंह 47

लोक-आलोक

मनजीत सिंह - हांगा पूरा लाईये, मेरी छान्न घलाईये 44

साक्षात्कार

डॉ. अशोक भाटिया से अशोक बैरागी की बातचीत 52

लेख

नरेश सैनी - स्कूलों में देशभक्ति कविताएं व बच्चे 67

पुस्तक समीक्षा

अरुण कुमार कैहरबा - आम जन के संघर्षों के साथ खड़ा गज़ल-संग्रह 70

रिपोर्ट

अरुण कुमार कैहरबा - सत्यशोधक यात्रा 40

अरुण कुमार कैहरबा - शिक्षा, संघर्ष व संगठन ... 74

जातिगत जनगणना
समता-स्वतंत्रता-बंधुता व न्यायपूर्ण समाज के लिए जरूरी कदम

भारत में हर दस साल के बाद जनगणना की जाती है। इसमें लोगों व उनके पास उपलब्ध साधनों व संसाधनों के आंकड़ों को संग्रहण किया जाता है। ये आंकड़े विकास की योजनाओं का आधार बनती हैं। भारत में पहली बार जनगणना 1881 में की गई थी। हर दस साल के बाद यह लगातार की जाती रही है। सन 1941 में विश्वयुद्ध होने के कारण इसमें कुछ बाधा आई थी। आजादी के बाद से यह कार्य निरंतर होता रहा है। आंकड़े एकत्रित करने के आधार भी शामिल किये जाते रहे हैं।

वर्तमान में जातिगत जनगणना को लेकर भारतीय समाज में तीखी बहस छिड़ी हुई है। एक पक्ष इसे सबको न्याय के लिए, विकास के समान अवसरों के लिए, शासन-प्रशासन व संसाधनों में भागीदारी के लिए जरूरी समझता है और सरकार से जाति जनगणना के लिए पुरजोर मांग कर रहा है। वहीं दूसरी ओर चंद लोग इसे जातिवाद को बढ़ावा देने वाला कदम कहकर खारिज कर रहे हैं। जातिगत जनगणना का विरोध करने वालों के मत को तर्क व तथ्यों की कसौटी पर कसने पर निर्मूल साबित होते हैं। जाति के आधार पर जनगणना देश के विकास के लिए जरूरी है, क्योंकि नीतियों व योजनाओं की दिशा तय करने का आधार है प्रमाणित आंकड़े। प्रमाणित आंकड़ों के बगैर नीति-योजनाएं बनाना अंधेरे में तीर चलाने जैसा है।

भारतीय समाज की संरचना में जाति-व्यवस्था सम्मान, सत्ता, संसाधनों में भागीदारी व बंटवारे का आधार रही है। भारत के विकास की कहानी का कटु सत्य यह है कि सबका समान विकास नहीं हुआ। सार्वजनिक स्कूल, कालेज व विश्वविद्यालय व अन्य संस्थाएं थी, लेकिन सबको उनका समान लाभ नहीं मिला और इसीलिए सबका विकास भी समान नहीं हुआ। जाति-समुदाय विशेष के लोगों का इनका भरपूर लाभ मिला, जबकि कुछ जातियों-समुदायों व वर्गों के अधिकांश लोगों को सार्वजनिक ढांचे का रत्ती भर लाभ नहीं हुआ।

सरकारी क्षेत्र में जाति के आधार पर आरक्षण की व्यवस्था की गई है जिसका आरक्षित वर्गों को निश्चित तौर पर लाभ हुआ है। इससे शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार व शासन-प्रशासन में प्रतिनिधित्व मिला है। जाति के आधार पर अन्य वर्ग भी प्रतिनिधित्व की मांग कर रहे हैं और पिछले कुछ वर्षों में इसे लेकर उग्र आंदोलन भी हुए हैं। दूसरी तरफ एक वर्ग आरक्षण को इसलिए खारिज करता है कि उससे सीमित जातियों के सीमित लोगों को ही लाभ पहुंच रहा है। इसे लेकर भी समाज में भ्रांतियां बनी हुई हैं जिससे समाज के विभिन्न वर्गों में अविश्वास पनपता है। सामाजिक भाईचारे के लिए भ्रांतियों का निवारण जरूरी है। जातिगत जनगणना के आधार पर सामाजिक-आर्थिक आंकड़े संग्रहण व सम्यक विश्लेषण से ही यह संभव है।

कुछ लोग जातिगत जनगणना को संविधान की भावना के खिलाफ बताते हुए भी इसका विरोध करने की कोशिश करते हैं. जबकि यह किसी प्रकार से गैर-संवैधानिक नहीं है। संविधान निर्माताओं ने व्यवस्था की थी कि सामाजिक व शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़े लोगों के विकास के विशेष प्रावधान किये जाएं। उसी के आधार पर काका कालेलकर आयोग बना और उसी के आधार पर मंडल आयोग बना जिसने सामाजिक व शैक्षणिक तौर पर पिछड़े लोगों के लिए शिक्षा व सरकारी नौकरियों में 27 प्रतिशत आरक्षण की सिफारिश की। लेकिन ये सिफारिशें सन 1931की जनगणना के आंकड़ों के आधार पर थी। मंडल आयोग की सिफारिशों को भी 40 साल से अधिक बीत चुके हैं, लेकिन जाति के आधार पर जनगणना नहीं हुई। कई प्रदेशों ने सामाजिक-आर्थिक सर्वेक्षण करवाए हैं और उनके आधार पर राज्य के लिए नीतियां बनाई हैं, जिनका बृहतर समाज ने स्वागत किया है और उसके सकारात्मक परिणाम भी निकले हैं।

हमारे पास पशुओं, पेड़ों-पौधों सहित हर चीज के आंकड़े हैं, लेकिन विडम्बना है कि मनुष्यों के आंकड़े नहीं हैं। समस्त संसाधनों का निर्माण मनुष्य करता है, वही समस्त चीजों की गिनती करता है, लेकिन उसकी गिनती नहीं होती। किस जाति-वर्ग के पास कितने संसाधन हैं, उनकी शक्ति और सीमाओं को जानने के ही उपक्रम नहीं किये जा रहे। जाति आधार पर जनगणना के बिना विषमता की खाई को पाटना मुश्किल होगा। समता-स्वतंत्रता-बंधुता व न्यायपूर्ण समाज के लिए जरूरी कदम है।

कहानी, कविताओं, साक्षात्कार के साथ इस अंक में स्वतंत्रता संग्राम में हांसी के योगदान व हिसार के स्वतंत्रता सेनानियों के बारे में विशेष सामग्री है। आशा है आपको अंक पसंद आयेगा।

सुभाष सैनी

ख़ुदकुशियां

मोपासां

अनुवाद - भगवान दास, मनप्रीत, मुलख सिंह

मुश्किल से कोई दिन गुजरता है जब अख़बार में इस तरह की कोई ख़बर हमारी नजर में न आती हो

" बुधवार रात 40 नंबर फ्लैट, सिल्वर सिटी... (कोई भी स्थान) में रहने वाले लोग दो गोलियां चलने की आवाज सुन कर जाग गए। धमाके की यह आवाज मिस्टर एक्स….. (कोई भी नाम) के अपार्टमेंट से आई थी। दरवाजा तोड़ा गया तो उस आदमी की लाश खून से लथपथ पड़ी थी और हाथ में एक पिस्टल था जिस से उसने अपनी जान ले ली थी। "

"मिस्टर एक्स, उम्र सत्तावन वर्ष, की अच्छी-खासी आमदनी थी और वो सब कुछ उसके पास था जिस से उसका जीवन खुशियों से भरपूर हो सकता था। उसकी आत्महत्या का कोई भी कारण नहीं मिला।"

कितने घोर दुख, कितनी अनजान पीड़ा, छुपी निराशा, रहस्यमयी जख्म होंगे जिन्होंने शायद इन आनंदित इंसानों को ख़ुदकुशियों की तरफ धकेल दिया? हम खोजते हैं, हमारे ख्याल में होते हैं - प्यार के दुखांत, अविश्वसनीय आर्थिक संकट…, और जिनमें हम कुछ ठोस नहीं जान पाते, उन मौतों के लिए ‘रहस्य’ शब्द का इस्तेमाल कर लेते हैं।

ऐसी ही 'बे-वजह ख़ुदकुशियों' में से एक का ख़त, जो उसने अपने जीवन की अंतिम रात लिखा और मेज पर उसकी भरी हुई रिवाल्वर के पास रखा हुआ मिला था, हमारे हाथ लग जाता है। हमें यह काफी दिलचस्प लगता है। यह उन महान विपदाओं में से किसी के बारे में भी नहीं बताता जिनकी हम अक्सर ऐसे हताशापूर्ण कृत्यों के पीछे होने की कल्पना करते हैं, बल्कि यह जीवन के प्रति उन छोटी-छोटी उक्ताहटों का धीरे-धीरे बढ़ते जाने तथा

एक अलगाव ग्रस्त व्यक्तित्व का बिखर जाना दिखाता है जिसके सपने मर चुके हैं; यह उन दुखद मौतों का कारण सामने लाता है जिसे केवल गम्भीर व संवेदनशील लोग ही समझ सकते हैं।

यही पेश है-

“आधी रात का समय है। जब मैं यह खत पूरा करूंगा, तो ख़ुदकुशी कर लूंगा। क्यों? मैं कारण बताने की कोशिश करूंगा, उनके लिए नहीं जो यह ख़त पढ़ेंगे बल्कि खुद के लिए, अपने पस्त होते हौसले को प्रज्वलित करने के लिए, ताकि मैं आत्महत्या के इस फैसले से पीछे न हटूं, जिसे अब ज्यादा से ज्यादा इसे मुलतवी ही किया जा सकता है लेकिन यह आत्मघाती कदम उठाना मेरे लिए बहुत लाज़िम हो गया है।

मेरे माता-पिता सरलचित्त थे जो कभी भी चीजों पर सवाल नहीं उठाते थे और मैं उनकी हर बात पर विश्वास करता था।

लंबे समय मैं सपनों में ही खोया रहा और आखिरकार मेरी आंखों से पर्दा हट गया I

पिछले कुछ सालों से मेरे भीतर एक विचित्र सा बदलाव आ रहा है। जीवन की वे घटनाएं जो पहले मुझे उज्जवल प्रतीत होती थीं, अब धुंधली सी रह गई हैं I चीजों का असली अर्थ मुझे उनकी क्रूर वास्तविकता से महसूस हुआ है और प्रेम के असली कारणों ने मेरे भीतर इस काव्य भाव के लिए घृणा भर दी है-

"मूर्खता और आकर्षक भ्रमों के हम अविनाशी खिलौने हैं, जिन्हें हर बार दोबारा सृजित किया जाता है।"

उम्र के साथ-साथ, मैंने जीवन की घोर रहस्यमयता और प्रयत्नों की व्यर्थता को काफी हद तक स्वीकार कर लिया थाI आज रात भोजन के उपरांत, जीवन की तमाम चीजों के खोखलेपन में मुझे एक नई रोशनी का अहसास हुआ।

पहले मैं बहुत खुश थाI हर चीज से मुझे खुशी मिलती थी- आती जाती महिलाएं, गलियों के दृश्य, वह स्थान जहां मैं रहता था और और यहां तक कि मैं अपनी पोशाक में भी रुचि रखता थाI एक ही जैसे दृश्यों के बार-बार सामने आने से मेरा हृदय उकताहट और घृणा से भर गया, जैसे किसी को हर रात एक ही फिल्म देखने के लिए सिनेमा जाना हो I

पिछले तीस सालों से, एक ही समय पर सुबह उठना और फिर, उसी एक होटल में जाना औरऔर उसी एक समय पर, अलग-अलग वेटरों द्वारा लाया गया मगर वही एक सा खाना खाना।

मैंने यात्राएं करने की भी कोशिश कीI अकेलापन, जो कोई अनजान जगह पर महसूस करता है; उसने मुझे भयभीत कर दियाI मैंने खुद को इस धरती पर इतना अकेला और छोटा महसूस किया कि मैं तुरंत अपने घर की ओर वापिस चल दिया।

लेकिन वहां पर भी कोई बदलाव न था। वही फर्नीचर, जो पिछले तीस सालों से उसी एक जगह पर पड़ा था। हर रात घर से वही एक गंध आती थी जो समय बीतने पर किसी एक स्थान से आने लगती है। इन सब बातों से मुझे घृणा हो गई और अब मैं इस तरह केजीवन से तंग हो गया हूँ।

यह सब अंतहीन दोहराव है। जिस तरीके से मैं अपने ताले में चाबी लगाता हूँ, वो स्थान जहां से मैं अपनी माचिस ढूँढता हूँ, वो चीज़ जो मुझे कमरे में प्रवेश करते समय सबसे पहले नज़र आती है, इन्हें देखकर महसूस होता है कि खिड़की से कूद जाऊँ और कभी पीछा न छोड़ने वाली इस नीरस दिनचर्याका अंत कर दूं।

हर रोज जब मैं दाढ़ी बनाता हूं तो मैं अपना गला काटने की, एक अजीब सी इच्छा महसूस करता हूं और मेरा चेहरा, जिसे मैं दर्पण में देखता हूं, गालों पर लगी साबुन से हमेशा वैसे का वैसा ही। इस उदासी ने मुझे दुर्बल बना दिया है।

अब तो मुझे उन लोगों से मिलने से भी नफरत होती है जिनसे कभी मैं बड़ी प्रसन्नता से मिला करता था। मैं उन्हें बहुत अच्छी तरह से जानता हूं, मैं बता सकता हूं कि वे क्या कहने वाले हैं और मैं क्या जवाब देने वाला हूं। हम सभी का दिमाग एक सर्कस की तरह हो गया है जहां पर एक ही घोड़ा निरंतर रूप से चक्कर लगाता रहता है। हम वही गोल गोल चक्कर लगाते रहते हैं, उन्हीं विचारों के इर्द-गिर्द, वही खुशियां, वही आनंद, वही आदतें, वही धारणाएं और वही घृणा की उत्तेजना।

आज शाम धुंध बड़ी भयानक थी। सड़क इसकी चपेट में इस तरह आ गई कि खंभों पर जल रही लाइटें, मोमबत्ती की तरह धुंधली प्रतीत होने लगी। सामान्य से अधिक वजन ने मुझे पीड़ित कर दिया, शायद मेरे शरीर का पाचन ठीक नहीं रहा।

आखिरकार अच्छा पाचन जीवन में बहुत कुछ होता है। यह कलाकार को प्रेरणा देता है; यह ही युवाओं को कामेच्छा, विचारकों को स्पष्ट विचार, प्रत्येक व्यक्ति को जीवन का आनंद देता है और इसी के कारण तो हम जी भरकर खा सकते हैं जोकि बहुत बड़ा सुख है। एक बीमार उदर संशय, अविश्वास, कुस्वप्नों व मृत्युकांक्षा को जन्म देता है। मैंने अक्सर ही यह बात देखी है। यदि मेरा पाचन दरुस्त होता, शायद इस शाम मैंने अपनी जान न ली होती।

जब मैं आराम कुर्सी पर बैठा हुआ था; उसी कुर्सी पर, जिसमें पिछले तीस वर्षों से हर रोज बैठता रहा हूँ, अपने चारों ओर देखा, और उसी वक्त मुझे ऐसी असहाय पीड़ा ने आ दबोचा कि मुझे लगा मैं जरूर पागल हो जाऊंगा।

मैंने सोचने की कोशिश की कि ऐसा क्या करूँ जिससे मैं स्वयं से दूर भाग सकूँ। कुछ भी करना मुझे अपनी निष्क्रियता से भी अधिक बुरा प्रतीत हुआ। फिर मैंने अपने कागजों को व्यवस्थित करने के बारे में सोचा।

काफी समय से मैं अपनी दराजें साफ करने के बारे में सोचा करता था। पिछले तीस सालों से मैं अपने पत्र, बिल बेतरतीब रूप में एक ही मेज में रखता रहा हूं और इस तरह की अव्यवस्था ने अक्सर ही मेरे सामने काफी मुश्किलें पैदा की थीं। लेकिन किसी भी चीज़ को व्यवस्थित करने के विचार मात्र से ही मैं अपने अंदर ऐसा नैतिक व शारीरिक आलस्य महसूस करता कि मुझसे कभी भी यह उबाऊ कार्य शुरू करने की हिम्मत नहीं हुई थी।

इसलिए मैंने अपने पुराने काग़ज़ात को छांटकर अलग करने तथा ज्यादातर को नष्ट कर देने के इरादे से अपना दराज़ खोल लिया।

पहले तो मैं इन अस्त-व्यस्त काग़ज़ात का ढ़ेर देखकर घबरा गया जो पुराने होने के कारण पीले हो चुके थे। , फिर मैंने उनमें से एक चुन लिया।

आह! यदि आपको जिंदगी से लगाव है तो पुराने पत्रों की दफ़नगाह कभी नहीं छेड़नी चाहिए!

और इत्तिफ़ाक़न उन्हें हाथ लगाना भी पड़े तो ध्यान रहे कि आपकी आखें उन पर लिखा कोई शब्द न पढ़ पाएं क्योंकि वे किसी पुराने हस्तलेख को पहचानकर आपको यादों के समंदर में डूबो सकती हैं। उन पत्रों को आग के हवाले कर दें और जब उनकी राख बन जाए तो उसे मसलकर, बुरादा बनाकर हवा में उड़ा देना चाहिए वर्ना आप जान की बाजी हार जाओगे, जैसे ठीक आधे घंटे बाद मैं हारने जा रहा हूँ।

पहले कुछ पत्र जो मैंने पढ़े, मुझे ज्यादा दिलचस्प न लगे। ये सभी हाल ही में लिखे गए थे तथा उन जीवित आदमियों के थे जिनसे अक्सर मुलाकात होती रहती है और उनका होना या न होना मुझे कोई ख़ास प्रभावित नहीं करता। लेकिन अचानक एक पत्र ने मुझे चौंका दिया। इस पर मोटे व बड़े अक्षरों में मेरा नाम लिखा हुआ था। एकदम मेरी आँखों में आँसू आ गए। यह पत्र मेरे जवानी के दिनों के साथी, मेरी आसों-उम्मीदों के हमराज़, मेरे सबसे प्रिय मित्र का था और इसे देखते ही, मधुर मुस्कान के साथ अपनी बाहें फैलाए, मेरा दोस्त इस तरह मेरे सामने आ खड़ा हुआ कि मेरी रीढ़ में कंपकंपी दौड़ गई। बिल्कुल, ऐसे ही तो, दुनिया से गए लोग वापिस आते हैं! हमारी स्मृतियों का संसार इस ब्रह्माण्ड से कहीं अधिक विस्तृत है; यह उन्हें भी जीवित कर देता है, जो अब नहीं रहे।

काँपते हाथों व मंद आँखों के साथ मैंने वह सब-कुछ दोबारा पढ़ा जो उसने मुझे लिखा था और मैंने अपने सिसकियों भरे असहाय हृदय में ऐसा पीड़ादायक घाव महसूस किया कि मैं ऐसे आदमी की तरह कराहने लगा जिसकी हड्डियां धीरे-धीरे चूर-चूर की जा रही हों।

फिर मैंने अपने पूरे जीवन का सफ़र किया, जैसे कोई नदी के साथ सफ़र करता है। मैंने उन लोगों को देखा जो लंबे अरसे से कभी याद न आए थे; जिनके नाम तक मैं भूल गया था। उनके चेहरे मेरे अंदर जिंदा थे। अपनी मां के पत्रों में दोबारा से मैंने देखा- पुराने नौकरों को, हमारे घर की बनावट और छोटे, बे-मा'ने, बे-ढंगे छोर जो हमारे दिमागों में चिमट कर रह जाते हैं।

हां, मैंने यकायक फिर से अपनी मां के लिबास देखे, वो मुख़्तलिफ़ अंदाज़ जो वो इख़तियार करती थी, वो कई तरीके जिनमें वो अपने बालों को सजाती थी। उसने मुझे विशेष रूप से एक रेशमी पोशाक में प्रेतवाधित किया, पुरानी किनारी के साथ तराशी की; और मुझे कुछ याद आया जो उसने एक दिन कहा था जब वह यह पोशाक पहना रही थी। उसने कहा: 'रॉबर्ट, मेरे बच्चे, अगर तुम सीधे नहीं खड़े होगे, तो तुम जीवन भर झुके रहोगे।'

फिर, एक और दराज खोलकर, मैंने खुद को मधुर यादों के रू-ब-रू पाया: डांसिंग पंप, फटा हुआ रूमाल, बालों की लटें और सूखे फूल। फिर मेरे जीवन के मधुर रोमांस, वो नायिकाएँ जो अभी जीवित हैं पर उनके बाल अब सफेद हो गए हैं, ने मुझे चीजों की गहरी उदासी में डुबो दिया। ओह, युवा माथे जहां भूरी लटें लहराती हैं, हाथों की दुलार, नज़र जो बोलती है, दिल जो धड़कते हैं, वो मुस्कान जो होंठों का वादा करती है, वे होंठ जो गले लगाने का वादा करते हैं! और पहला चुंबन-वह अंतहीन चुंबन जो आपकी आंखें बंद करवा देता है, जो सभी ख़यालों को मिलन के अथाह आनंद में डुबो देता है!

पूर्व प्रेम की इन पुरानी प्रतिज्ञाओं को अपने दोनों हाथों में लेते हुए, मैंने उन्हें उग्र दुलार से ढाँप लिया, और एक-बार फिर आखिरी वक़्त इन यादों से से टूटे हुए, अपनी रूह में, मैंने उन्हें देखा। और मुझे जहन्नुम के बारे में, तमाम अफ़सानों में ईजाद करदा तमाम अज़ीयतों से ज़्यादा ज़ालिमाना अज़ीयत का सामना करना पड़ा।

एक आख़िरी ख़त रह गया है। ये मेरी तरफ़ से लिखा गया था और पच्चास साल पहले मेरे तहरीरी उस्ताद ने लिखवाया था। ये है-

"मेरी प्यारीमाँ

मैं आज सात साल का हूँ, ये अक़्ल की उम्र है। मुझे इस दुनिया में लाने के लिए आपका शुक्रिया अदा करने का सुलाभ लेता हूं।

तुम्हारा छोटा बेटा, जो तुमसे प्यार करता है-

राबर्ट"

"अब ये सब ख़त्म हो गया है। मैं शुरू में वापिस चला गया था, और अचानक मैंने अपनी नज़र इस ज़िंदगी पर डाली जो मेरे पास बाक़ी रह गई थी। मैंने देखा कि घिनावना

और तन्हा बुढ़ापा है, और कमज़ोरियाँ क़रीब आती जा रही हैं, और सब कुछ ख़त्म हो गया है। और मेरे क़रीब कोई नहीं है।

"मेरा रिवॉल्वर यहां मेज़ पर है। मैं उसे लोड़ कर रहा हूँ.... अपने पुराने ख़ुतूत को दुबारा मत पढ़ना!"

और ऐसे कितने ही आदमी ख़ुद को मार लेते हैं। और हम बेकार में ही उनकी ज़िंदगी में किसी महान दुख की तलाश करते रहते हैं।

ग़ज़ल

लोग जब बेदार होंगे देखना
कुछ नए किरदार होंगे देखना

गर उजाड़ोगे यूँ ही तुम आशियाँ
तिनके ही तलवार होंगे देखना

कब तलक बेकार फिरेंगे नौजवां
हाथ में हथियार होंगे देखना

बेचने जितने हैं जुमले बेचलो
ठप ये कारोबार होंगे देखना

सर उठाकर चल सकोगे किस तरह
पाँव में दस्तार होंगे देखना

जिन सरों से है तुम्हारी दुश्मनी
ताज के हकदार होंगे देखना

मनजीत भोला

1857 की क्रांति और हांसी

✍राजकुमार जांगड़ा

वर्तमान युग सूचना प्रसारण और तकनीकी का युग है। हम एक ही स्थान पर देश-विदेश और दुनिया के अलग अलग कोने की सूचनाएं और जानकारी प्राप्त करते हैं और अपने ज्ञान में वृद्धि करते हैं। लेकिन बड़े दुख के साथ कहना पड़ता है कि कई बार हम अपने आसपास के क्षेत्र और घटनाओं के बारे में जानकारी प्राप्त नहीं कर पाते हैं। जो अपने आप में बहुत महत्वपूर्ण होते हैं। इस बात का एहसास मुझे 29 फरवरी से 1 मार्च 2020 को 'देस हरियाणा' की टीम द्वारा 'हरियाणा सृजन यात्रा' के दौरान हुआ। इसकी दो घटनाएं मुझे सोचने पर मजबूर करती हैं कि इस सूचना प्रसारण क्रांति के युग में भी हम अपने आस पड़ोस की घटनाओं की जानकारी नहीं रखते हैं।

पहली घटना 29 फरवरी 2020 की है देस हरियाणा की हरियाणा सृजन यात्रा का रात का ठहराव रेवाड़ी जिला के गांव गुड़ियानी में था। वहां पहुंच कर हमें पता चला कि 1857 की क्रांति के दौरान एक ही दिन में आसपास के क्षेत्र के 114 स्वतंत्रता आंदोलन में भाग लेने वाले क्रांतिकारी शहीद हुए थे। अंग्रेजों ने एक ही दिन में 114 लोगों को गुड़ियानी के पास की पहाड़ी पर फांसी दी थी। वहाँ का शहीद स्मारक आज भी इनकी शहादत का गवाह है। मुझे लगता है कि इतनी बड़ी और दिल को दहलाने वाली इस घटना की देश ही नहीं हरियाणा के भी अधिकतर लोगों को जानकारी नहीं है।

दूसरी घटना 1 मार्च 2020 की है। इस दिन हरियाणा सृजन यात्रा का चौथा पड़ाव महान सूफी संत बाबा फरीद की साधना स्थली चार कुतुब हांसी जिला हिसार में था। इस कार्यक्रम में हांसी और आसपास के क्षेत्र के कई गांवों से बहुत लोग आए हुए थे। इनमें अध्यापक, डॉक्टर, वकील, समाजसेवी, व्यापारी, मजदूर और विद्यार्थी सभी प्रकार के लोग शामिल हुए थे। उनके साथ बातचीत करने का मौका मिला तो उन लोगों ने बताया कि वे इसी क्षेत्र के रहने वाले हैं। लेकिन चार कुतुब को आज पहली बार देख रहे हैं। तथा इनमें से बहुत से ऐसे लोग भी थे जिन्होंने हांसी का ऐतिहासिक और बहुत मशहूर किला आज तक भी नहीं देखा है।

चार कुतुब विश्व प्रसिद्ध कवि, रचनाकार बाबा फरीद की कर्म स्थली और साधना स्थली रही है। यह विश्वभर में प्रसिद्ध है। लेकिन आसपास के क्षेत्र के लोगों को इसकी जानकारी नहीं है। दरगाह चार कुतुब भारतीय उपमहाद्वीप की विख्यात चिश्तिया सिलसिले में चौथे स्थान पर आती है इसमें एक ही परिवार के चार सूफी संतों की मजारें हैं। इसलिए इसका नाम दरगाह चार कुतुब रखा गया है। यहां विश्व प्रसिद्ध सूफी संत बाबा फरीद आए और हरियाणा में अपनी गद्दीयां स्थापित की तथा चिश्ती परंपरा को आगे बढ़ाया। इन दोनो घटनाओं से लगता है कि हमें अपने आसपास के क्षेत्र और घटनाओं के विषय में भी जानकारी होना भी बहुत आवश्यक है। हमारे आस पड़ोस में भी इस प्रकार के बहुत सारे स्थल हैं जो बहुत बड़ी घटनाओं के गवाह हैं।

इसी बात को ध्यान में रखते हुए आजादी के अमृत महोत्सव के अवसर पर मेरे क्षेत्र के 1857 की क्रांति के बहुत बड़े केंद्र हांसी के विषय में कुछ जानकारी साझा करने का प्रयास है।

हांसी की सामान्य जानकारी और इतिहास :- हांसी हरियाणा राज्य के जिला हिसार का उपमंडल है तथा वर्तमान समय में पुलिस जिला भी है। यह राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली से पश्चिम दिशा में लगभग 142 किलोमीटर की दूरी पर महाराजा अग्रसेन राष्ट्रीय राज मार्ग पर स्थित है। हांसी मध्यकाल का बहुत ही विख्यात शहर रहा है। यह हिसार से बहुत प्राचीन शहर है। हिसार इससे बहुत बाद में बसाया गया है। यह समुद्र तल से 225 मीटर की ऊंचाई पर बसा है। अगर आपका हांसी या आसपास के क्षेत्र में आगमन होता है तो यहां के प्रसिद्ध स्थलों का भ्रमण जरूर करें। इनमें हांसी का किला, चार कुतुब, 1857 की क्रांति की गवाह लाल सड़क, गांव रोहनत का कुआं , राखी गढ़ी इत्यादि प्रमुख हैं। तथा हांसी का पेड़ा भी देशभर में प्रसिद्ध है इसका स्वाद भी जरूर चखें।

प्राचीन हांसी शहर पांच दरवाजों के बीच में बसा हुआ था। इसकी पूर्व दिशा में दिल्ली दरवाजा, पश्चिम दिशा में हिसार दरवाजा, उत्तर पश्चिम दिशा में गोसाई दरवाजा, दक्षिण पश्चिम दिशा में उमरा दरवाजा तथा दक्षिण दिशा में बड़सी दरवाजा स्थित था। इनमें से बड़सी दरवाजा आज भी स्थित है जो एक दर्शनीय स्थल है और पुरातत्व महत्व का बहुत बड़ा गवाह है।

प्राचीन समय में भारत का कोई भी ऐसा शासक नहीं होगा जो अपने मनोरंजन के लिए, छुट्टी का समय बिताने के लिए,सैर करने के लिए या शिकार करने के लिए हांसी के वनों में नहीं आया होगा। हांसी के आसपास का वनों से हरा भरा और झीलों और तालाबों का यह क्षेत्र हर किसी को अपनी ओर आकर्षित करता रहा है। यह क्षेत्र बड़े बड़े राजाओं और सम्राटों को अपनी ओर आकर्षित करता रहा है। इसके साथ साथ बहुत से संतो, पीरों और फकीरों की साधना स्थली भी रहा है। यह क्षेत्र गुजरात के बाद सन 1830 तक बाघों और बब्बर शेरों की भूमि भी रहा है। इस क्षेत्र में बहुत ज्यादा बब्बर शेर और बाघ थे। यहां

कपास की बहुत ज्यादा पैदावार होती रही है। जिसके कारण हांसी में बहुत सारे रूई के कारखाने स्थापित हुए। इन्हीं कारखानों के कारण सरकार ने यहां बहुत बड़ा धागा मिल भी स्थापित किया था। इसलिए हांसी को भारत का मिनी मैनचेस्टर भी कहा गया है। प्राचीन समय में हांसी में बनी हुई तलवारे विश्व प्रसिद्ध रही है। डॉक्टर भूप सिंह राजपूत ने अपनी पुस्तक हांसी ऐतिहासिक सिंहावलोकन में कहा है कि इस्लाम धर्म के पैगंबर हजरत मोहम्मद की तलवार जुल्फिकार भी असिगढ़ यानी हांसी के दुर्ग में ही बनाई गई थी। हांसी का किला बहुत ही मजबूत और बड़ा किला रहा है। पश्चिम के आक्रांताओं और लुटेरों को रोकने के लिए इस किले ने प्रहरी का काम किया है। इस क्षेत्र में बहुत ही बलिष्ठ योद्धा हुए हैं। इस किले पर विजय प्राप्त करना कोई आसान काम नहीं किया था। इस प्रकार यह किला अजय रहा है। इस बहुत बड़े और मजबूत किले का निर्माण 1191 ई में सम्राट पृथ्वीराज चौहान ने तराइन युद्ध में विजय प्राप्त करने के बाद अपनी जीत की खुशी में करवाया था। जो शहर से बहुत ज्यादा ऊंचाई पर स्थित था। उस समय में इस क्षेत्र के आसपास के किलों का संचालन भी इसी किले से होता रहा है। वर्तमान समय में भी किले के अंदर बहुत सी ऐतिहासिक महत्व की चीजें देखने योग्य हैं। इनमें से प्रमुख है किले का मुख्य दरवाजा जो दक्षिण दिशा में स्थित है। किले का दरवाजा और बड़सी दरवाजा एक ही सीधी रेखा में स्थित है।

1857 की क्रांति में हांसी का योगदान :-1857 की क्रांति चिंगारी भी 29 मई 1857 को ही शोला बनकर भड़की । उस समय हांसी की छावनी में अंग्रेज फौज के लगभग 170000 सैनिक थे। जिन्होंने अंग्रेजों के विरुद्ध बगावत की थी। उस समय एक व्यक्ति जिसका नाम मुरारी था वह अंग्रेजों का घरेलू नौकर था जिसको इस बगावत की भनक लग गई थी उसने इसकी खबर अंग्रेजों को दे दी थी जिसके कारण अंग्रेज अधिकारी पहले ही हांसी छोड़कर भागने में कामयाब हो गए थे। लेकिन 11 अंग्रेज अफसर महिला,पुरुष और बच्चे इस विद्रोह में मारे गए थे। उनके आवास, दफ्तर जला दिए और सरकारी खजाना लूट लिया था । इसके 3 घंटे बाद ही हिसार की सेना में भी विद्रोह हो गया था जिसके कारण हिसार के डीसी और उसके पूरे परिवार सहित 22 अंग्रेज अधिकारियों की हत्या कर दी गई थी और हिसार का खजाना भी लूट लिया था। हांसी के विद्रोह में पुट्ठी मंगलखां, रोहनात, हाजमपुर, जमालपुर, भटोल रांगड़ान आदि गांव के किसानों ने अपनी खेती बाड़ी में प्रयोग होने वाले उपकरणों जैसे जैली, गंडासी, लाठी, फरसा और भाला इत्यादि का हथियार के रूप में प्रयोग किया और अंग्रेज सेना का डटकर मुकाबला किया और अंग्रेजों को वहां से भागने पर मजबूर कर दिया था । हांसी की जेल को तोड़कर कैदियों को जेल से बाहर कर दिया। उस समय हांसी और हिसार के आसपास का प्रत्येक गांव

अंग्रेजों के विरोध में विद्रोह का अड्डा बन गया था। इन गांव के किसान अंग्रेजों की तानाशाही शोषण और साम्राज्यवाद के विरुद्ध अपने देसी हथियारों से लड़ रहे थे ।और दुनिया के सबसे बड़े साम्राज्यवाद को टक्कर दे रहे थे। इन गांवों में रातों को मीटिंगें ओर सलाह मशवरा होता था और अंग्रेजों के विरुद्ध लड़ने की योजनाएं तैयार होती थी। इस प्रकार इस क्षेत्र के बहुत अधिक किसानों ने इस विद्रोह में बढ़ चढ़कर भाग लिया था। मई के अंतिम सप्ताह में मुगल परिवार का शहजादा आजम सम्राट बहादुर शाह जफर के प्रतिनिधि के रूप में हांसी पहुंचा और उसने हांसी की कमान अपने हाथों में ली। शहजादा आजम के हांसी पहुंचने के कारण इस क्षेत्र के किसानों, सैनिकों और क्रांतिकारियों में बहुत अधिक उत्साह पैदा हुआ और उन्होंने इकट्ठे होकर इस जंग को आगे बढ़ाने का एलान किया और उनका तन मन धन से सहयोग किया। इस प्रकार विद्रोह की चिंगारी दूर-दूर तक फैल गई तथा अंग्रेजो कि सेना को खदेड़ दिया गया। और इस क्षेत्र को अंग्रेजों के चुंगल से स्वतंत्र करवा लिया।

इस क्षेत्र को दोबारा अपने कब्जे में लेने के लिए जून 1857 में अंग्रेजों ने पहला हमला रानिया जिला सिरसा में किया। नूर मोहम्मद खां व स्थानीय लोगों की अंग्रेजों के साथ भयंकर जंग हुई तथा अंग्रेजों का डटकर मुकाबला किया लेकिन अंग्रेजों के आधुनिक हथियारों के सामने देसी हथियार टिक नहीं पाए जिसके कारण 530 क्रांतिकारी शहीद हो गए तथा हजारों क्रांतिकारी घायल हो गए।

6 सितंबर 1857 को हांसी के पास दोबारा शहजादा आजम की सेना और अंग्रेजों के बीच भयंकर जंग लड़ी गई जिसमें शहजादा आजम की सेना को हार का मुंह देखना पड़ा । 11 सितंबर को गांव मंगाली में, 30 सितंबर को गांव जमालपुर में किसानों और अंग्रेजों के बीच बहुत भयंकर जंग हुई। इस लड़ाई में इन गांव के सभी लोग हिंदू और मुसलमान बिना किसी भेदभाव के मिलकर लड़े तथा अंग्रेजों का डटकर मुकाबला किया। उस समय उनके सामने दुश्मन केवल एक ही था और वह था साम्राज्यवाद।

इस जंग में भी अंग्रेजों के आधुनिक हथियारों के सामने किसानों और क्रांतिकारियों के देसी हथियार ज्यादा समय तक टिक नहीं पाए और शहजादे की सेना को हार का मुंह देखना पड़ा। उसके बाद पुट्ठी मंगलखां में जंग हुई और इसमें 400 क्रांतिकारी शहीद हो गए तथा शहजादा आजम को एक बार फिर हार का मुंह देखना पड़ा। इसके बाद 25 सितंबर 1857 को क्रांतिकारियों ने तोशाम पर कब्जा कर लिया। वहां के अधिकारियों की हत्या कर दी, सरकारी खजाना लूट लिया तथा उस समय अंग्रेजों के साथ देने वाले अंग्रेजों के पिट्ठू व्यापारियों,अंग्रेजों यह सहयोगियों और अंग्रेजों के मुखबिरों की संपत्ति लूट ली। इसके बाद शहजादा आजम की सेना, किसान और क्रांतिकारी इकट्ठा होकर हांसी की तरफ बढ़े

तथा गांव हाजमपुर में अंग्रेजों के साथ भयंकर जंग हुई। इसके बाद गांव रोहनात में किसानों ने अंग्रेजों का सामना किया। लेकिन अंग्रेजों की सेना बहुत बड़ीऔर आधुनिक हथियारों के साथ थी तथा उनके साथ भारतीय राजाओं ने जिसमें जींद, पटियाला और बीकानेर के राजा शामिल थे ने अंग्रेजों का साथ दिया जिसके कारण क्रांतिकारियों को हार का मुंह देखना पड़ा।

इसके बाद हांसी की कमान लाला हुक्म चंद जैन व मुनीर बेग ने संभाली तथा एक बार फिर हिंदू और मुसलमान दोनों ने बिना किसी भेदभाव के मिलकर जंग लड़ी। लाला हुकुमचंद जैन ने सम्राट बहादुर शाह जफर को सहायता के लिए पत्र लिखा कि आप हांसी में सेना भेजें और यहां की कमान संभाले । हम सब मिलकर पूरे जोश के साथ सेना का साथ देंगे और लड़ाई को जारी रखेंगे। यह पत्र पाकर बहादुर शाह जफर ने शहजादा आजम को दोबारा हांसी भेजा उसने यहां आकर हिंदू-मुसलमान दोनों को इकट्ठा होकर अंग्रेजों के विरुद्ध लड़ाई लड़ने के लिए तैयार किया। लेकिन दिल्ली पर अंग्रेजो का कब्जा होने के कारण तथा बहादुर शाह जफर को रंगून जेल भेज देने के कारण यह विद्रोह असफल हो गया। इसके बाद अंग्रेजों ने लाल किले पर कब्जा कर लिया और किले की तलाशी ली गई ताकि विद्रोहियों के बारे में ज्यादा से ज्यादा जानकारी प्राप्त की जा सके। इस तलाशी में लाला हुकम चंद जैन कानूनगों व मिर्जा मुनीर बेग द्वारा भेजा गया पत्र भी अंग्रेजों के हाथ लग गया। जिसके कारण हांसी के क्रांतिकारियों का पर्दाफाश हो गया। इसका बदला लेने के लिए अंग्रेजों ने अपना दमन चक्र चलाना शुरु कर दिया। विद्रोहियों को कुचलने के लिए अपनी सेना भेज दी। इस पलटन में ज्यादातर अंग्रेजों के वफादार हिंदू सैनिक ही थे। जिनको गांव के जिन लोगों ने विद्रोह में भाग लिया था उन सब की जानकारी उनके पास थी। उन्होंने गांव से युवाओं को पकड़ कर लाना शुरू कर दिया और मारे गए अंग्रेज अधिकारियों का बदला बहुत भयंकर रूप से लेना शुरू कर दिया। अंग्रेज पलटन ने बड़सी दरवाजे से लेकर लाल सड़क होते हुए डडल पार्क तक (जहां आज भी एक शहीद पार्क बना हुआ है) लोगों को सड़क पर लेटाया और उनके ऊपर बैलों के साथ खींची जाने वाली गिरड़ी (एक प्रकार का रोड़ रोलर) चलाई गई जिसके नीचे हजारों लोगों को कुचलकर मारा गया। इसके बाद जिन मुस्लिम समुदाय के लोगों ने इस क्रांति में बढ़ चढ़कर भाग लिया था उन 183 लोगों को लूटमार और कत्ल के आरोप में फांसी लटकाया गया। इन लोगों को फांसी की सजा इनके अपने गांव में ही सार्वजनिक रूप से वृक्षों पर लटका कर दी गई। अंग्रेजों का इरादा इस क्षेत्र में ज्यादा से ज्यादा भय पैदा करना था। इसलिए जिस गांव के युवा पकड़े गए थे

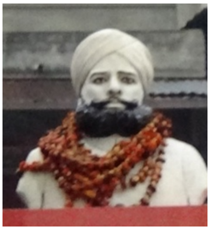

लाला हुक्मचंद जैन

उनको उसी गांव में सरेआम फांसी पर लटका दिया गया था। और यह एलान करवा दिया गया था कि जो भी कोई व्यक्ति इनकी लाश को देखेगा, उसके पास जाएगा या उतारेगा उनके पूरे परिवार को भी इसी तरह फांसी लटका लिया जाएगा। इसके कारण इस क्षेत्र में भय का वातावरण पैदा हो गया और उन नौजवानों की लाशों को चील कौवों ने ही खाया तथा उनके अस्थि पिंजर पेड़ों से ऊपर ही लटकते रहे। बहुत अधिक लोगों को काले पानी की सजा दी गई। यह भय इसलिए पैदा किया गया कि भविष्य लोग अंग्रेज हुकूमत के साथ टकराने का दुस्साहस न कर सकें

पुट्ठी गांव के मंगल खां जो एक हिंदू परिवार में पैदा हुआ था। कई साल पहले पड़े अकाल के कारण अपने परिवार से बिछड़ गया था। क्योंकि अकाल के समय लोग अपना घर बार छोड़कर काम धंधे की तलाश में दूर दूर जा रहे थे। इस प्रकार यह बच्चा अपने परिवार से बिछड़ गया था। और रोहनात गांव में पहुंच गया था। वहां उसका पालन पोषण एक मुसलमान परिवार ने किया था। इसके कारण उसका नाम मंगल से मंगल खान रख दिया था। तथा पालन पोषण कर्ता मुस्लिम परिवार ने अपनी लड़की की शादी भी मंगल खान के साथ कर दी थी। यही कारण कि आज पुट्ठी गांव का नाम पुट्ठी मंगल खां है। इसके पास ही एक छोटा सा गांव है पुट्ठी पियादियाँ उसने शादी के बाद वहां रहना शुरू किया। अंग्रेजों ने मंगल खां और कायदे खां को हांसी के किले पर तोप के मुंह से बांधकर उड़ा दिया।

इसी प्रकार रोहनात गांव के क्रांतिकारी स्वामी बिरड़ दास रागी को भी तोप के मुंह से बांधकर उड़ा दिया। नोधा जाट, रूपा खाती और अन्य लोगों को गिरफ्तार करके हांसी में सड़क पर लिटा कर गिरड़ी के नीचे कुचलकर मार दिया। क्रांति में भाग लेने वाले सभी गांवों के युवकों को पकड़ पकड़ कर लाया जाता कुछ को गांवों में ही वृक्षों पर फांसी दे दी जाती। बाकी को सड़क पर लेटा कर गिरड़ी के नीचे कुचल कर मार दिया जाता। राह चलते लोगों को भी शिकार बना दिया जाता था। इस घटना के दौरान किसी को भी अपने घरों से भी इन्हें देखने का हुक्म नहीं था। जिन लोगों के घर इन वृक्षों के पास थे। उन्हें भी इस मंजर को देखने की मनाही थी। वे लोग भी इन्हें नहीं देख सकते थे। यह सड़क पहले ईटों की बनी हुई थी। यह शहीदों के रक्त से लाल हो गई तब से इस

सड़क का नाम पर लाल सड़क रखा गया। जिसे आज भी लाल सड़क के नाम से जाना जाता है। इस सड़क पर शहीद स्मारक भी बना हुआ है।

अगर आपका कभी हांसी या आसपास जाना हो तो इस सड़क पर जरूर जाएं और उन शहीदों को नमन करने का सौभाग्य प्राप्त करें।

अंग्रेजों के अत्याचार यहीं पर नहीं रुके। जिन गांव ने क्रांति में भाग लिया था। उन गांव पर तोप के गोलों की वर्षा की गई तथा गांव के लोगों को जिंदा जला दिया । इस प्रकार वहां भय का वातावरण पैदा किया गया। महिलाओं और बच्चों ने कुएं में कूदकर जान बचाने की कोशिश की। लेकिन बच नहीं पाए। जलियांवाला बाग की तरह रोहनात गांव में भी इस प्रकार का एक कुआं है जिसमें सैकड़ों महिलाओं बच्चों और लोगों ने छलांग लगाई और कुएं में ही उनकी मृत्यु हो गई थी। हांसी के विद्रोह को दबाने के लिए तत्कालीन बीकानेर शासक सरदार सिंह की सेना ने अंग्रेजों का पूरा साथ दिया। उस समय हांसी और हिसार को अंग्रेजों से आजाद करवा लिया गया था। और कई दिन तक आजाद भी रहे। लेकिन हमारे देश के ही राजाओं ने अंग्रेजों का पूरा साथ दिया और हमारे देश में क्रांतिकारियों का दमन किया। बीकानेर की सेना ने तोशाम, हिसार और फतेहाबाद क्षेत्र के विद्रोह को दबा कर इस क्षेत्र को अंग्रेजों के हवाले कर दिया। जींद के राजा ने हांसी क्षेत्र के विद्रोह को दबाने में अपनी सेना को अंग्रेजों की मदद में लगा दिया।

इस विद्रोह पर पूर्ण रूप से काबू पा लेने के बाद इस सहायता के बदले अंग्रेजों ने बीकानेर के शासक को सिरसा के भाटी राज्य के 40 गांव उपहार स्वरूप दिए तथा जींद के राजा को झज्जर रियासत तोड़कर दादरी क्षेत्र का 600 वर्ग मील क्षेत्र इनाम स्वरूप भेंट किया जिस की वार्षिक आय ₹103000 थी। इस विद्रोह को दबाने में पटियाला रियासत के राजा ने भी अंग्रेजों का भरपूर सहयोग किया था। उसको झज्जर रियासत के तोड़े गए भाग नारनौल का एक बड़ा भाग जिसकी वार्षिक आय ₹200000 थी। इनाम स्वरूप दे दी।

इसके अलावा मदौर रियासत और नामा के महाराज को दोनों रियासतों के शेष भाग कांटी, बावल आदि क्षेत्र जिनकी वार्षिक आय ₹160000 थी इनाम के रूप में दे दी।

इसके अतिरिक्त हांसी से दिल्ली रोड पर गांव ढाणा कलां, ढाणा खुर्द,जीतपुरा, रीचपुरा,ढाणी पीरां, ढाणी कुम्हारां, ढाणी पीरांवली आदि नो गांव व आस का क्षेत्र महाराजा फरीदकोट को अंग्रेजों की मदद करने के बदले इनाम स्वरूप दे दिए। जिन राजाओं ने अंग्रेजों का साथ लिया उन्हें इनाम मिला और जिन लोगों और राजाओं ने क्रांतिकारियों का साथ दिया उन्हें अपनी जान से हाथ धोना पड़ा और अपनी रियासत से हाथ धोना पड़ा। इनमें झज्जर के नवाब अब्दुल रहमान खान, बल्लभगढ़ के राजा नाहर सिंह, फरुखनगर के नवाब अहमद अली, बहादुरगढ़ के राजा और सिरसा के भाटी राजा शामिल थे।

1857 की क्रांति का नेतृत्व कर रहे सम्राट बहादुर शाह जफर के दो बेटों के सिर काटकर होने थाल में सजाकर सम्राट को भेंट किया गया और उन कटे सिरों के साथ वहां प्रदर्शन भी किया गया।

इस विद्रोह को दबाने के बाद अंग्रेज हुकूमत ने फ़रवरी 1858 ईस्वी में हरियाणा प्रदेश को जो पहले उत्तर पश्चिम प्रांत, आधुनिक उत्तर प्रदेश से अलग करके पंजाब प्रांत में मिला दिया। 14 सितंबर 1857 जिला हिसार के जिलाधीश ने हांसी के तहसीलदार को पत्र लिखकर गांव रोहनात के लोगों को बागी घोषित किया और इस गांव की पूरी जमीन की नीलामी का आदेश दिया। 20 जुलाई 1858 अनुसार रोहनात गांव की बोली कर दी गई। पूरे के पूरे गांव की जमीन और बसासत की भूमि सभी की बोली कर दी। जिसे गांव उमरा के 29, सुल्तानपुर के 20, मेहन्दा का एक, भगाना के 7और मुजादपुर4 लोगों ने 8100 रुपए में बोली देकर सारे गांव को खरीद लिया। पुट्ठी मंगल खां गांव को मात्र ₹4500 की नीलामी देकर हिसार के एक व्यापारी ने खरीद लिया। इन गांवों के लोग दर-दर की ठोकरें खाने पर मजबूर हो गए। अंग्रेजी सत्ता के डर से कोई भी इनकी मदद नहीं करता था। इसके बाद लोगों ने मेहनत मजदूरी करके थोड़े पैसे इकट्ठे किए और आस पड़ोस में थोड़ी बहुत जमीनें खरीदी। अन्यथा आस पड़ोस के गांव की भूमि पर ही कृषि कार्य करके अपना पालन पोषण करने पर मजबूर हो गए ।क्योंकि उनकी अपनी कोई कृषि भूमि नहीं है।

हांसी का क्षेत्र अत्याचार का गढ़ हो गया थाम अंग्रेज वहां बहुत बुरी तरह से अत्याचार करते थे। जिला कलेक्टर हिसार जनरल वार्न को दिल्ली से पत्र भेजा गया। उसमें लाला हुकम चंद जैन और मिर्जा मुनीर बेग ने जो पत्र बहादुर शाह जफर को सहायता के लिए लिखा था। जिनमें उन्होंने क्रांतिकारियों के प्रति वफादारी दिखाई थी। इसका बदला लेने के लिए भी उन्होंने तैयारी कर ली थी। यह पत्र इन दोनों के लिए मुसीबत बन गया था। इस पत्र

को लिखने वाले लाला हुकम चंद जैन के भतीजे फकीर चंद थे। उनको भी गिरफ्तार कर लिया और उस पर राजद्रोह का मुकदमा चला। उसे 5 साल की कठोर कारावास की सजा हुई। इस मुकदमे में बड़े नाटकीय ढंग से लाला हुकम चंद जैन कानूनगो और मिर्जा मुनीर बेग दोनों को मृत्युदंड की सजा दी गई। इन दोनों को लाला हुकम चंद जैन की हवेली के सामने डडल पार्क में सार्वजनिक रूप से फांसी दी गई। इनके शवों की इनके धर्म के विरुद्ध आचरण करते अंत्येष्टि की। लाला हुकम चंद जैन के शव को हिंदू होते हुए दफनाया गया और मिर्जा मुनीर बैग के शव को मुस्लिम होते हुए जलाया गया। यह सब भय पैदा करने और धार्मिक वैमनस्य और उन्माद पैदा करने के लिए किया गया था।

इसके बाद लाला हुकम चंद जैन के भतीजे फकीर चंद जैन के विरुद्ध दोबारा मुकदमा चलाया। उन्हें 5 साल के कठोर कारावास की जगह फांसी की सजा दे दी। इस प्रकार अंग्रेजों ने इस क्षेत्र के लोगों पर बदले की भावना से बहुत कहर बरपाया। तत्कालीन परिस्थितियों को देखकर यह कहा जा सकता है कि उस समय लोगों में आपस में किसी भी प्रकार का धार्मिक, जातिगत और क्षेत्र के आधार पर भेदभाव नहीं था।सब लोगों का एक ही दुश्मन था अंग्रेज और साम्राज्यवाद। वे सब इस दुश्मन के विरुद्ध इकट्ठा होकर लड़े। इस क्षेत्र के लोग अंग्रेजों की बहुत बड़ी और आधुनिक हथियारों से लैस सेना के विरोध में अपने देसी हथियारों के साथ बड़े जोश के साथ लड़े, डटकर मुकाबला किया और बहुत बड़ी संख्या में अपनी शहादत दी। हांसी और हिसार के आसपास के गांव के बहुत बड़ी संख्या में लोग शहीद हुए जो बेनामी के अंधकार में खो गए हैं। जिनको गुमनामी के अंधकार से रोशनी में लाने की बड़ी जरूरत है। हम बड़े शहरों और दूर दूर के आंदोलनों के बारे में किताबों में और पाठ्यक्रम में भी पढ़ते हैं। लेकिन हम अपने आसपास और अपने गांव के लोगों की शहादत के विषय में नहीं जानते हैं।

इसी प्रकार बरवाला के जागीरदार जो हिसार के डोगरान मोहल्ला में रहते थे। वे हिसार से बरवाला आते और जाते समय बीच के गांव से होकर जाते थे और वहां अंग्रेजों के विरुद्ध मीटिंग करते थे। उनमें से एक गांव सुलखनी भी था। वे सुलखनी में भी मस्जिद में मीटिंग करते थे और अंग्रेजों के विरुद्ध योजना बनाते थे। जिसकी भनक अंग्रेज सरकार को लग गई। जिसके कारण वहां के 9 लोगों को सार्वजनिक रूप से पेड़ों पर फांसी दे दी गई थी और उनकी लाशों को देखने और छूने का अधिकार किसी को नहीं था। उन लाशों को चील और कोओं ने खाया और और उनके अस्थि पिंजर पेड़ों पर ही लटकते रहे। अगर कोई वहां से गुजर जाता था तो उसको भी इसी प्रकार की सजा दी जाती थी। इस प्रकार अट्ठारह सौ सत्तावन की क्रांति में हंसी और उसके आसपास के क्षेत्र का बहुत बड़ा योगदान था। और यह 1947 तक चलता रहा जब तक कि अंग्रेजों को भारत से खदेड़ न दिया गया।

हांसी-हिसार के स्वतंत्रता सेनानी – संक्षिप्त परिचय

राजकुमार जांगड़ा

जब भी शासन सत्ताओं के दमनकारी कुचक्र के विरोध में सामान्य जनमानस खड़ा हुआ है तब बड़े से बड़े तख्तोताज धराशायी हुए है। इसका जीता जागता उदाहरण है भारत का स्वतंत्रता आंदोलन। जिस समय देश के किसानों, कामगारों और सामान्य नागरिकों ने दमनकारी सत्ताओ का डटकर मुकाबला किया तो अंग्रेजों को भारत छोड़कर जाना पड़ा। आजादी के अमृत महोत्सव के अवसर पर ऐसे ही स्वतंत्रता सेनानियों के विषय में जानने का प्रयास है।

स्वतंत्रता सेनानी का नाम : श्री कुरड़ा राम

स्वतंत्रता सेनानी का विवरण उनके सुपुत्र श्री सतपाल सिंह नम्बरदार ने दिया है।

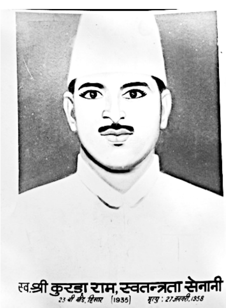

पिता का नाम: श्री उदमी राम

जन्मतिथि: 1901

पता: गांव कुलेरी जिला हिसार (हरियाणा)

पत्नी का नाम: श्रीमती ज्याना देवी

भाई : तीन एक की बचपन मे ही मृत्यु हो गई थी। बाकी दो में से भी श्री भोपाल सिंह ने भी स्वतंत्रता आंदोलन में भाग लिया जेल गए और वो भी स्वतंत्रता सेनानी थे। इससे यह सिद्ध होता है कि उस समय लोगों को परिवार से भी अधिक स्वतंत्रता से प्रेम था जिस कारण परिवार के सभी कमाने वाले सदस्य जेल जाने से पीछे नही हटे।

संतान: एक पुत्र व चार पुत्रियाँ।

मृत्यु: 27 जनवरी 1958 बीड़ बाबरान जिला हिसार

श्री कुरड़ा राम अपने माता पिता की पहली संतान थे तथा उनका बचपन गांव कुलेरी जिला हिसार में ही गुजरा। युवा अवस्था मे अपनी बुआ के बेटे से वैद्यक का काम सीखने के लिए वे बुआ के घर गाँव गंगाना तहसील गोहाना जिला सोनीपत रहने लगे। कुछ समय बाद बुआ के बेटे की मृत्यु होने व बुआ के परिवार में कोई देखरेख करने वाला न रहने के कारण उन्हें गाँव गंगाना में ही निवास करना पड़ा।

स्वतंत्रता आंदोलन से जुड़ाव: गाँव गंगाना में रहकर वैद्य कार्य करते हुए तत्कालीन पंजाब के स्वतंत्रता आंदोलनकारियों व कांग्रेस कार्यकर्ताओं पण्डित श्रीराम शर्मा, सरदार भगतसिंह के पिता सरदार किशनसिंह, चौधरी रणबीर सिंह हुडडा, राव सोहनलाल तथा अन्य से उनका सम्पर्क हुआ इसके बाद वे बैठकों, सभाओं और आंदोलनों में भाग लेने लगे तथा स्थानीय भाषा मे भजनों व गीतों द्वारा लोगो को जागरूक करने का कार्य करने लगे।

कांग्रेस की सदस्यता: श्री कुरड़ा ने 1929 में कांग्रेस की सदस्यता ग्रहण की तथा 31 दिसम्बर 1929 को भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का वार्षिक अधिवेशन तत्कालीन पंजाब प्रांत की राजधानी लाहौर में हुआ इस ऐतिहासिक अधिवेशन में कांग्रेस के 'पूर्ण स्वराज' का घोषणा-पत्र तैयार किया तथा 'पूर्ण स्वराज' को कांग्रेस का मुख्य लक्ष्य घोषित किया। जवाहरलाल नेहरू, इस अधिवेशन के अध्यक्ष चुने गये। इस अधिवेशन में श्री कुरड़ा ने डेलीगेट के रूप में भाग लिया।

जेल यात्राएं: श्री कुरड़ा राम ने अनेक आन्दोलनों भाग लिया तथा बहुत बार जेल गए। उनकी मृत्यु के समय उनके सुपुत्र श्री सतपाल सिंह की आयु लगभग 2 वर्ष 6 महीने थी। इसलिए उन्हें मौखिक रूप से बताई गई जानकारी का ज्ञान नहीं है। वर्तमान समय में चार बार जेल की सजा का प्रमाणित रिकार्ड उनके पास है जो निम्न प्रकार से है :

1. 05 जून 1930 को नमक आंदोलन में कांग्रेस कमेटी रोहतक का जत्था अहमदाबाद के लिए गया जिसे 23 जून 1930 को वीराम गांव में गिरफ्तार कर लिया गया तथा श्री कुरड़ा राम 3 महीने की सजा हुई तथा अहमदाबाद जेल में 24 जून 1930 को कैदी नम्बर 16539 के रूप में बंद किया गया। उसके बाद 10 जुलाई 1930 को अहमदाबाद जेल से यरवदा केंद्रीय जेल के लिए रवाना किया गया तथा 11 जुलाई 1930 को न्यू कैम्प जेल यरवदा में कैदी नम्बर 36 के रूप में बंद किया गया और 22 सितम्बर 1930 जेल से रिहा हुए।
2. 06 जनवरी 1932 को श्री कुरड़ा राम ने अपने साथियों के साथ गाँव की चौपाल में कांग्रेसी झंडा फहराया जिसकी शिकायत अंग्रेज सरकार के पास

पहुँची तथा तत्कालीन नायब तहसीलदार हजारी सिंह झंडा उतरवाने के लिए अपनी टीम के साथ गांव में पहुँचे और झंडा उतारने का आदेश दिया लेकिन ग्रामीणो ने झंडा उतारने से मना कर दिया। उसके बाद गांव के चौकीदार को झंडा उतारने को कहा तो ग्रामीणों ने उसे भी नहीं उतारने दिया अंत में नायब तहसीलदार खुद झंडा उतारने के लिए गए तो ग्रामीणों ने उनकी पिटाई कर दी इस कारण पुलिस ने ग्रामीणों को गिरफ्तार कर लिया उसके बाद ही झंडा उतार सके। उन्हें बहुत बुरी तरह से यातनाएं दी। मुकदमा चला तथा 22 अप्रैल 1932 को मजिस्ट्रेट मियां रतनसिंह ने

चन्दगीराम पुत्र भिन्जा मनियार
कुरड़ा राम पुत्र उदमीराम सुनार
मांगेराम पुत्र जुगलाल जाट
नेकी राम पुत्र सिंहराम जाट
सरूपा पुत्र मोहा जाट
छोटू राम पुत्र हरद्वारी जाट
मोती पुत्र शंकर महाजन

सात लोगों को धारा 143 IPC के अंतर्गत 1 महीना कठोर कारावास और धारा 153 IPC के तहत 50 रुपये जुर्माना या 1 महीना कठोर कारावास की सजा दी।

3. श्री कुरड़ा राम को 03 सितंबर 1932 को दोबारा गिरफ्तार कर लिया तथा RSL अमरनाथ ने 19 सितंबर 1932 को मुकदमा नम्बर 317/3 धारा 108 CrPC के अंतर्गत एक साल का कठोर कारावास और 1000रू का बॉन्ड व इतनी ही सिक्योरिटी की सजा दी। इस दौरान रोहतक जेल में बंद रहे।

4. जेल में रहते हुए ही मुकदमा नम्बर 66/2 में धारा 117 IPC के अंतर्गत जज मियां रतन सिंह ने 28 नवंबर 1932 को 6 महीने का कठोर कारावास C क्लास जेल की सजा सुनाई। जिसमे कैदी नम्बर 4015 के रूप में रोहतक जेल में बंद रहे।इसके बाद 16 जनवरी 1933 को मुल्तान जेल में भेजा गया जिसमें कैदी नम्बर 192 के रूप में बंदी रहे।

विभिन्न आंदोलनों में भागीदारी: श्री कुरड़ा ने नमक सत्याग्रह, भारत छोड़ो आंदोलन, विदेशी सामान का बहिष्कार आदि अनेक आन्दोलनों में तन मन से भाग लिया। जिस के कारण वो सालो तक घर नही आ पाते थे।

महात्मा गांधी से मुलाकात : गांधी जी और जवाहरलाल नेहरू ने रोहतक में सभा की जिसमें कुरड़ा राम ने भी भाग लिया। भजनोपदेशक होने के कारण उन्होंने भजन सुनाये जिससे गांधी जी बहुत प्रभावित हुए तथा लंबे समय तक अपने साथ रखा। इस दौरान उन्होंने गांधी जी के सचिव के रूप में भी कार्य किया।

जेलों में यातनाएं : श्री कुरड़ा राम को जेल में बहुत यातनाएं दी गई बेंतों और कोड़ों से मारा जाता था सिर को बचाने के लिए सिर पर हाथ रख लेते थे तो हाथों पर मार पड़ने के कारण उनके हाथों की सभी उंगलियां टूट गई थी।

जेल में भोजन : उन्हें जेल में भोजन बहुत ही निम्न स्तर का दिया जाता था। कई बार रोटियों में आटे के साथ चूना भी मिला दिया जाता था जिसके कारण उनकी पाचन क्रिया कमजोर हो गई थी और स्वास्थ्य भी खराब हो गया।

घर के सामान की कुर्की : कमाने वाले दो भाइयों के स्वतंत्रता आंदोलन में जुड़े होने व बार बार जेल जाने के कारण घर में केवल महिलाएं ही रह गई थी आर्थिक रूप से कमजोर होने पर गुजारा भी मुश्किल से हो पाता था। श्री कुरड़ा राम को जेल की सजा के साथ जुर्माना भी होता था जिसकी उगाही के लिए घर के सामान को नीलाम कर दिया जाता था। एक बार तो घर बर्तन भी नीलाम कर दिए गए फिर भी जुर्माना राशि पूरी न होने पर उनके बिटौड़े (गोबर के उपले) को भी नीलाम कर दिया।

बहु भाषाओं का ज्ञान : जेल में स्वतंत्रता आंदोलन में भाग लेने वाले अलग भाषा बोलने वाले कैदी बन्द होते थे जिसके कारण उन्होंने जेल में बहुत सारी भाषाएँ सीख ली थी जिनका प्रयोग वे अपने पत्रों में करते थे।

पहचान छुपाना : पुलिस से बचने के लिए बार बार वेशभूषा और नाम बदलकर पैदल यात्रा करते थे और मीटिंग व जागरूकता अभियान चलाते थे।

स्वतंत्रता के बाद धार्मिक सहिष्णुता के लिए कार्य : स्वतंत्रता के बाद भारत पाकिस्तान के विभाजन के कारण धार्मिक उन्माद फैला तो कुछ लोगों ने भारत से पाकिस्तान जाने वाले परिवार को लूटने और मारपीट करने का काम किया जिससे एक युवती जो परिवार से बिछड़ गई। जिस पर लोगों ने भालों से हमला कर दिया। जिसको श्री कुरड़ा राम ने लोगों से बचाया और उसको अपने घर लेकर आये व लगभग 3-4 महीनों तक उसका इलाज करवाया। इस दौरान बार बार भारत सरकार व पाकिस्तान सरकार को लिखा जिससे उसके परिवार तक उस लड़की के जीवित व सुरक्षित होने का संदेश पहुँच

गया। लगभग 4 महीने बाद पाकिस्तान से परिवार युवती लेने के लिए आया। तब तक वह ठीक भी हो गई थी। युवती को उसके परिवार के साथ विदा कर दिया।

सम्मान: 1958 में पंजाब सरकार ने बीड बाबरान जिला हिसार में 12.5 एकड़ कृषि भूमि देकर सम्मानित किया।

मृत्यु : बहुत अधिक यातनाएं सहने के कारण उनका स्वास्थ्य खराब रहने लगा जिसके कारण 27 जनवरी 1958 को 52 वर्ष की आयु में बीड बाबरान में उनका देहांत हो गया।

स्वतंत्रता सेनानी श्री अमरनाथ

स्वतंत्रता सेनानी श्री अमरनाथ के विषय में बहुत ही महत्वपूर्ण जानकारी इनके 85 वर्षीय पुत्र श्री शिवकुमार सेवानिवृत्त अध्यापक ने दी है

स्वतंत्रता सेनानी का नाम :श्री अमरनाथ

पिता का नाम: श्री प्रभु दयाल (जलियांवाला बाग नरसंहार में शहीद)

जन्मतिथि: 18 जून 1907

जन्मस्थान: लौहगढ़ बाजार कूंचा कसुरियाँ अमृतसर (पंजाब)

पत्नी का नाम : श्रीमती सत्यवती

भाई: 1) देवीदास 2) बलवंत राय

बहन: एक

पुत्र: श्री शिवकुमार

पुत्रियां:1) स्वर्णलता 2) जनक देवी

मृत्यु: 11 जून 1990

मृत्यु का स्थान : बीड बाबरान जिला हिसार (हरियाणा)

शिक्षा : मुनीमी परीक्षा पास

क्रांतिकारी पारिवारिक पृष्ठभूमि : 13 अप्रैल 1919 को श्री प्रभुदयाल अपने दो पुत्रों (देवीदास और अमरनाथ) के साथ जलियांवाला बाग में जलसा देखने गए। वे वहाँ भाषण सुनने लगे तथा उनके दोनों किशोर पुत्र स्वर्णमंदिर में चले गए। कुछ समय बाद

अंग्रेज ब्रिगेडियर जर्नल रेजीनॉल्ड डायर ने अपने सिपाहियों को गोली चलाने का आदेश दिया जिसमें श्री प्रभुदयाल शहीद हो गए।

इस नरसंहार की अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर बहुत भर्त्सना हुई। इस पर लीपापोती के लिये अंग्रेजी शासन ने शहीद के परिजनों को प्रलोभन देना आरंभ किया कि जो परिजन अपने सदस्य की मौत को प्राकृतिक मृत्यु मानने को तैयार है उसे 20000 रुपये का मुआवजा दिया जाएगा। लेकिन उनकी पत्नी ने उस समय की बहुत बड़ी राशि के प्रलोभन को ठुकरा दिया और अपने पति की शहादत का कारण नरसंहार ही बताया।

इसका बदला लेने के लिए अंग्रेजी शासन ने उनके व्यापारिक प्रतिष्ठान को सील कर दिया जिससे व्यापार समाप्त हो गया और परिवार को बहुत दुर्दशा का सामना करना पड़ा।

आंदोलनों से जुड़ाव : श्री अमरनाथ तीन भाइयों में बीच के थे। उस समय कांग्रेस के तीन स्तम्भ डॉ शेफ़ुद्दीन किचलू, महाशय रत्तू उर्फ रतनलाल और चौधरी बुगा राम के संपर्क में आने के कारण उन्होंने किशोरावस्था में ही भाई संत सिंह, अमृतसर की अगुवाई में कांग्रेस वॉलिंटियर कॉर्प कटरा की सदस्यता ग्रहण की।

वे डॉ शेफुद्दीन किचलू द्वारा संचालित वार कॉउंसिल आंदोलन के भी सदस्य रहे। इसके अतिरिक्त उन्होंने श्री अमीरचन्द गुप्ता , माता आत्मा देवी ,रघबीर कौर (MLA) कामरेड सुरजन सिंह, श्री रोशनलाल, कामरेड तारा सिंह, सरदार अनासिंह झब्बल ,सलीम उल्लाह और कर्मचन्द साहनी के साथ बिना किसी जाति,धर्म और अन्य भेदभाव के स्वतंत्रता आन्दोलनों में भाग लिया।

जेल यात्राएँ:

1. जलियांवाला बाग नरसंहार के बाद अंग्रेजी शासन ने रॉलेट एक्ट के विरोध में श्री अमरनाथ को गिरफ्तार कर लिया तथा अमृतसर किले में बंद करके कठोर यातनाएं दी। उसके बाद बोस्टल जेल लाहौर में बंद कर दिया। मदनमोहन मालवीय की अध्यक्षता में बनी तहकीकात कमेटी 1919 की जांच के बाद 1920 में जेल से बाहर किया परन्तु दोबारा से गिरफ्तार करके 10 महीने के लिए जेल में बंद कर दिया। श्री गुलाब सिंह जो बाद में हरियाणा के मंत्री बने इनके साथ जेल में बंद रहे।
2. 1923 में अकाली आंदोलन हुआ। इस आंदोलन का भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने हकीम सिकन्दर खिज्र की अध्यक्षता में सहयोग किया तथा श्री अमरनाथ भी इस आंदोलन में शामिल रहे। गुरू का बाग अमृतसर से इन सभी को गिरफ्तार कर लिया तथा एक वर्ष तक लाहौर जेल में बंद रखा।

3. अज़ीज़ खान शिरम नेतृत्व में 24वें वार काउंसिल का सदस्य होने के कारण 19 अगस्त 1930 को अमृतसर से गिरफ्तार करके 15 दिन तक अमृतसर जेल में बंद कर दिया और मुकदमा चलाया गया। एस एस दौलत की अमृतसर अदालत में धारा 17B के अंतर्गत 9 महीने की जेल की सजा सुनाई। जिसके कारण इन्हें लाहौर जेल के अहाता नम्बर 3 में बंद किया गया। गाँधी इर्विन समझौता के बाद ये जेल से रिहा हुए।

इस प्रकार श्री अमरनाथ का बचपन और युवावस्था जेल में गुजरी।

सम्मान और पुरस्कार:

1) सन 1955 में पंजाब सरकार ने बीड बाबरान जिला हिसार में 12.5 एकड़ कृषि भूमि देकर सम्मानित किया।

2) सन 1972 में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने ताम्रपत्र और स्वतंत्रता सेनानी पेंसन से सम्मानित किया।

3) सन 1985 में हरियाणा सरकार ने ताम्रपत्र और पेंशन से सम्मानित किया।

11 जून 1990 को बीड बाबरान जिला हिसार (हरियाणा) में इनका निधन हो गया।

पिता और पुत्र दोनों स्वतंत्रता सेनानी

श्री किशन सहाय उर्फ रामशरण व मांगे राम

मजदूरी करके जीवनयापन करने वाले पिता और पुत्र दोनों दिल्ली के लाल किला मैदान में सुभाष चंद्र बोस के आह्वान पर घर बार छोड़कर ऐसी परिस्थितियों में भी स्वतंत्रता आंदोलन में भाग लेने वाले स्वतंत्रता सेनानियों श्री किशन सहाय और श्री मांगेराम के विषय में महत्वपूर्ण जानकारी एकत्रित करने में उनके पौत्र श्री सुरेंद्र सिंह व श्री जितेंद्र पाल का बहुत बड़ा योगदान रहा है।

स्वतंत्रता सेनानी: श्री किशन सहाय उर्फ रामशरण

पिता का नाम : श्री कल्लू राम उर्फ कालू राम।

जन्म का वर्ष : 1870

जन्मस्थान: गांव नाहरी जिला सोनीपत (हरियाणा)

पत्नी का नाम: श्रीमती रेहला देवी।

संतान: एक पुत्र स्वतंत्रता सेनानी श्री मांगेराम।

व्यवसाय: मजदूरी

स्वतंत्रता आंदोलन से जुड़ाव:

सुभाष चंद्र बोस ने दिल्ली के लाल किला मैदान में जनसभा का आयोजन किया। जिसे सुनने के लिए श्री किशन सहाय अपने पुत्र मांगेराम के साथ जनसभा में पहुँचे। इस जनसभा को चारों ओर से अंग्रेज पुलिस ने घेर रखा था। सुभाष चंद्र बोस ने लोगों से स्वतंत्रता आंदोलन में भाग लेने के लिए आह्वान किया। इससे प्रभावित हो कर पिता और पुत्र दोनो ने घर ना जाकर स्वतंत्रता आंदोलन में भाग लेने का प्रण लिया।

कारावास और जुर्माना : महात्मा गांधी की जय का नारा लगाने पर पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया और मुकदमा चलाया गया जिसमें एक महीना का कठोर कारावास और 200 रुपये जुर्माना की सजा हुई। दिल्ली जेल में बंद रहकर सजा पूरी की।

सम्मान : स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत सरकार ने 30 रुपये मासिक पेंशन देकर सम्मानित किया।

मृत्यु : प्रमाणित जानकारी उपलब्ध नही है।

स्वतंत्रता सेनानी का नाम : श्री मांगेराम

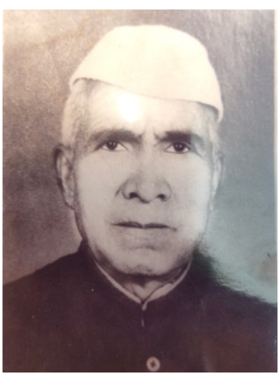

पिता का नाम : श्री किशन सहाय उर्फ रामशरण

माता का नाम : श्रीमती रेहला देवी

जन्मतिथि: 19 अक्टूबर 1907

जन्मस्थान: गांव नाहरी जिला सोनीपत (हरियाणा)

पत्नी का नाम : दाखां देवी

संतान : 4 पुत्र (3 की बचपन में मृत्यु हो गई) केवल श्री वेदपाल जीवित बचे।

शिक्षा : चौथी कक्षा तक।

भाषाओं का ज्ञान: हिंदी,पंजाबी और उर्दू।

व्यवसाय: मजदूरी।

स्वतंत्रता आंदोलन में जुड़ाव : लाल किला मैदान दिल्ली की जनसभ में सुभाष चंद्र बोस के आह्वान पर आंदोलन में भाग लेने का प्रण लिया।

स्वतंत्रता आंदोलन के सहयोगी : ये श्रीराम शर्मा, लाला चन्दगी राम, चौधरी रणबीर सिंह हुडडा और बाबा सूरत सिंह छारा इत्यादि के साथ आंदोलन में और जेल में बंदी रहे।

कारावास और जुर्माना :

1. सन् 1930 में नमक सत्याग्रह में भाग लिया इसलिए पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया तथा अढ़ाई महीनों तक रोहतक हवालात में बंद रखा। मुकदमा चला जिसमें एक वर्ष छः महीने कठोर कारावास और 200 रुपये जुर्माना की सजा हुई। इन्हें रोहतक से मिंटगुमरी जेल (वर्तमान पाकिस्तान में) में बंद कर दिया।
2. 26 जनवरी 1932 में चाँदनी चौक दिल्ली में यौमे आजादी मनाते हुए झंडा फहराया गया जिसके कारण पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया और अदालत में मुकदमा चला। मिस्टर पुलके की अदालत ने साढ़े चार महीने का कठोर कारावास और 100 रुपये जुर्माना की सजा सुनाई। इसलिए मुल्तान केंद्रीय कारागार में बंद रखा गया। जुर्माना ना भरने के कारण पुलिस घर का सामान उठा ले गई।
3. सन् 1940-41 में व्यक्तिगत सत्याग्रह में भाग लिया और सब्जीमंडी दिल्ली से पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया। दिल्ली की अदालत ने एक महीने की साधारण कारावास की सजा दी।

स्वतंत्रता प्राप्ति तक सक्रिय रूप से भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस से जुड़े रहे तथा पुलिस से अपनी पहचान को गुप्त रखकर विभिन्न आन्दोलनों में भाग लेते रहे।

स्वतंत्रता के बाद : भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के पूर्णकालिक कार्यकर्ता के रूप सक्रिय रहे। तत्कालीन सांसद सी के नायर के साथ दिल्ली और बाद में कलकत्ता में कार्य किया।

सामाजिक कार्यकर्ता : स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद जरूरतमंद और निरक्षर लोगों की मदद के लिए उनके कोर्ट कचहरी या कार्यालयों के काम के लिए साथ जाकर मदद करते रहे। जिसके कारण वे अधिकतर घर से बाहर रहते थे।

ग्राम पंचायत में भागीदारी: ये लगातार ग्राम पंचायत में निर्विरोध पंच निर्वाचित होते रहे तथा गाँव मे नम्बरदार के रूप में कार्यरत रहे।

सम्मान :

1) भारत सरकार ने स्वतंत्रता सेनानी के रूप में पेंशन देकर सम्मानित किया।

2) सन 1955 में तत्कालीन पंजाब सरकार ने बीड़ बाबरान में 12.5 एकड़ भूमि देकर सम्मानित किया।

3) 15 अगस्त 1972 को तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने ताम्रपत्र देकर सम्मानित किया।

4) 15 अगस्त 1985 को हरियाणा सरकार ने ताम्रपत्र देकर सम्मानित किया।

5) 1985 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की 100वीं वर्षगाँठ पर पदक से सम्मानित किया।

6) 1991 में हरियाणा राज्य की रजत जयंती के उपलक्ष्य में पदक से सम्मानित किया।

7) 1992-93 में हरियाणा सरकार ने भारत छोड़ो आंदोलन की स्वर्ण जयंती पर पदक से सम्मानित किया।

मृत्यु : 13 मार्च 1998 को इन्होंने अपनी जीवनयात्रा पूरी की।

स्वतंत्रता सेनानी का नाम : मास्टर फतेह सिंह

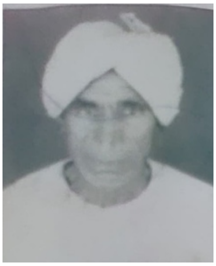

पिता का नाम: श्री जवाहरलाल

माता का नाम: श्रीमती मनभरी देवी

जन्मतिथि : 8 मई सन 1916

भाई : रण सिंह और कीडू राम

जन्म स्थान: गांव घिराय तहसील हांसी जिला हिसार (हरियाणा)

शिक्षा: विद्या प्रचारिणी सभा के स्कूल से मिडिल परीक्षा पास तथा प्रभाकर की परीक्षा पास की।

पत्नी का नाम : श्रीमती छोटो देवी

मृत्यु: 3 मई 1996 पूर्णिमा के दिन गांव घिराय जिला हिसार में अंतिम सांस ली।

सामाजिक कार्य में योगदान : सन् 1934 में रोहतक में बाढ़ ग्रस्त क्षेत्र में लोगों की सहायता के लिए बढ़-चढ़कर भाग लिया इसके बाद सन् 1939 में अकाल के कारण उत्पन्न भयंकर परिस्थितियों में अकाल ग्रस्त लोगों की बढ़-चढ़कर सहायता की। लाला हरदेव

सहाय के संपर्क में आने के कारण विद्या प्रचारिणी सभा के अंतर्गत जिला भिवानी के गांव सांडवा के विद्यालय में अध्यापक के रूप में काम किया तथा ग्राम सेवा मंडल व भारत गौसेवक समाज के सक्रिय सदस्य के रूप में कार्य किया। एक कौमी फकीर के रूप में गांव-गांव और गली-गली पैदल घूमकर स्वाधीनता संग्राम, स्वदेशी, विद्या प्रचार, शराबबंदी, स्त्री शिक्षा, राष्ट्रीय एकता तथा ग्राम सुधार का लगातार कार्य किया।

स्वतंत्रता आंदोलन में भागीदारी : गांव सांडवा भिवानी में अध्यापन कार्य करते समय राष्ट्रपिता महात्मा गांधी हो गए नेता जी श्री सुभाष चंद्र बोस के विचारों से प्रभावित होकर 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन के समय अध्यापक पद से त्यागपत्र देकर स्वतंत्रता आंदोलन में बढ़ चढ़कर भाग लिया। कई महीनों तक भूमिगत रहते हुए स्वाधीनता आंदोलन का प्रचार किया। अंग्रेज सरकार के दमन चक्र का विरोध करने के लिए भिवानी के पास रेल की पटरी को उखाड़ने की तैयारी के लिए मीटिंग में भाग लिया इसकी भनक अंग्रेज सरकार को लग जाने के कारण जनवरी 1943 में भिवानी से डिफेंस ऑफ इंडिया रूल्स की धारा 56 के अंतर्गत गिरफ्तार कर लिया गया और हिसार जेल में बंद कर दिया। अदालत में मुकदमा चला और सुल्तान सिंह प्रथम श्रेणी मैजिस्ट्रेट भिवानी की अदालत ने 6 महीना कठोर कारावास की सजा सुनाई तथा ओल्ड सेंट्रल जेल मुल्तान भेज दिया गया जहां से उन्होंने कारावास की सजा को पूरा किया।

लाला हरदेव सहाय के 'सेवक' साप्ताहिक हिंदी पत्र 31 सितंबर 1951 के अनुसार इन्होंने जेल में रहते हुए भी प्रौढ़ शिक्षा कार्य किया तथा कैदियों को शिक्षा देने का कार्य किया।

कारावास में साथी स्वतंत्रता सेनानी : इन्होंने मुख्य रूप से लाला हरदेव सहाय, दादा गणेशी लाल, बलवंत राय तायल और चौधरी देवीलाल के साथ कारावास की सजा पूरी की।

इसके बाद गांव सांडवा में अध्यापन कार्य शुरू किया तथा अध्यापन के साथ-साथ सामाजिक कार्यों में भी बढ़ चढ़कर भाग लिया। गांव सांडवा में पानी का बहुत बड़ा संकट था। वहां उन्होंने गांव वालों को कुंड बनाने के लिए प्रोत्साहित किया और खुद भी बढ़ चढ़कर भाग लिया तथा उस समय जनसहयोग से लगभग 80000 रू (अस्सी हजार रुपये) की लागत से लगभग 5 वर्ष लगातार कार्य करके कुंड बनवाने का काम किया जिससे गांव में पानी की समस्या का समाधान हो गया। 1957 से अध्यापक पद से त्यागपत्र देकर सामाजिक कार्यों में बढ़ चढ़कर भाग लिया। 5 वर्ष तक जिला कांग्रेस कमेटी के सदस्य के रूप में कार्यरत रहे। गांधी जी के विचारों से प्रभावित होकर इन्होंने हमेशा हाथ से कते मोटे सूट के वस्त्र पहने तथा लंबे समय तक चरखा संघ में खादी कार्य किया तथा कताई स्कूलों

का निरीक्षण भी किया और पूरे जीवन केवल खादी का कपड़ा पहना तथा पूरे जीवन शराब धूम्रपान व चाय का भी प्रयोग नहीं किया।

सम्मान और पुरस्कार:

1) केंद्र सरकार द्वारा स्वतंत्रता सेनानी के रूप में पेंशन प्रदान की।

2) सन 1972 में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने ताम्रपत्र और स्वतंत्रता सेनानी पेंशन से सम्मानित किया।

3) सन 1985 में हरियाणा सरकार ने ताम्रपत्र और पेंशन से सम्मानित किया।

फोटो: श्री फतेह सिंह

स्वतंत्रता सेनानी का नाम: डॉक्टर दरियाव सिंह

डॉक्टर दरियाव सिंह के पौत्र श्री सुरेंद्र सिंह दलाल ने उनके बारे में बहुत सारी महत्वपूर्ण जानकारी उपलब्ध करवाई है जिनका विवरण निम्न प्रकार से है:-

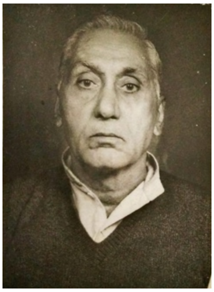

स्वतंत्रता सेनानी का नाम: डॉक्टर दरियाव सिंह

पिता का नाम: श्री हरि सिंह (नायब तहसीलदार)

माता का नाम: श्रीमती नानो देवी उर्फ प्रकाश देवी

दादा का नाम : श्री मजलिस

जन्मतिथि : 06 जनवरी 1918

जन्म स्थान : गांव कुंभा तहसील हांसी जिला हिसार(हरियाणा)

शिक्षा: मिडिल परीक्षा सन 1934 में मिडल स्कूल सातरोड़ खुर्द जिला हिसार (शिक्षा विभाग पंजाब) से पास की। मैट्रिक की परीक्षा मार्च 1937 में जाट हाई स्कूल हिसार (पंजाबी यूनिवर्सिटी) से पास की। मई 1940 में वैद्य कविराज का तीन वर्षीय डिप्लोमा दयानंद आर्य आयुर्वेदिक कॉलेज लाहौर से पास किया।

भाइयों के नाम : श्री बलबीर सिंह और श्री अमर सिंह

बहन का नाम : श्रीमती निराणी देवी

पत्नी का नाम : श्रीमती सरूपी देवी (01/07/1930 - 06/08/2017)

सन्तान: पांच पुत्र और एक पुत्री

पुत्री : श्रीमती चंद्र देवी
पुत्र: 1)श्री भगत सिंह
2) श्री सत्यवीर सिंह
3) श्री महेंद्र सिंह
4) श्री रामचंद्र सिंह
5) श्री राजेंद्र सिंह
देहांत : 29 जनवरी 2017 गांव कुंभा तहसील हांसी जिला हिसार

स्वतंत्रता आंदोलन में भागीदारी और कारावास :

1) विदेशी कपड़े का बहिष्कार में शराबबंदी आंदोलन में भागीदारी:- महात्मा गांधी के विचारों से प्रभावित होकर इन्होंने विदेशी कपड़े की होली जलाना और शराब विरोधी आंदोलन में लाहौर (पंजाब) में बढ़-चढ़कर भाग लिया जिसके कारण पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया और इन्हें 28 दिन की सजा हुई जिसके कारण लाहौर जेल में बंद रहे।

2) हैदराबाद सत्याग्रह 1938-39 में भागीदारी :- श्री दरियाव सिंह जिस समय डीएवी आयुर्वेदिक कॉलेज लाहौर में तीन वर्षीय 'वैद्य कविराज' का डिप्लोमा (1937 से 1940) कर रहे थे तभी विद्यार्थी जीवन में ही हैदराबाद सत्याग्रह आंदोलन में भाग लिया तथा पंजाब से हैदराबाद जाने वाले जत्थों में शामिल हुए। लाहौर से पहला जत्था मिलाप अखबार के मालिक जत्थेदार महाशय शुशालचंद के नेतृत्व में दूसरा जत्था प्रताप अखबार के मालिक जत्थेदार महाशय कृष्ण के नेतृत्व में हैदराबाद के लिए निकला।दोनो जत्थे लाहौर से चलकर मुंबई होते हुए सोलापुर पहुंचे। प्रत्येक जत्थे में 20-20 आदमी थे तथा सोलापुर के दो आदमी नागपुर में जत्थे में शामिल हुए जो उन्हें गाइड करके नागपुर से रात को निजाम की चौकियों से बचते हुए कलम शहर जिला उस्मानाबाद के लिए निकले।वहां जंगल में शहर से पहले एक तालाब के पास रुके तथा सुबह होने पर कलम शहर में प्रवेश किया और शहर की गली और सड़कों पर प्रदर्शन किया तथा नारे लगाए जिसके कारण 12/13 फरवरी 1939 को पुलिस ने कलाम जिला उस्मानाबाद (हैदराबाद रियासत) से सभी प्रदर्शनकारियों को गिरफ्तार कर लिया और उस्मानाबाद जेल भेज दिया। एक सप्ताह के बाद उस्मानाबाद जेल से सेंट्रल जेल औरंगाबाद में भेज दिया। 2 महीनों तक औरंगाबाद सेंट्रल जेल में बंद रहे। उसके बाद सेंट्रल जेल हैदराबाद में शिफ्ट कर दिया गया। 17 अगस्त 1939 को राजनीतिक

सरूपी देवी

कैदियों की आम रिहाई समझौता होने पर जेल से रिहा हुए। इस प्रकार 12/13 फरवरी 1939 से 17 अगस्त 1939 तक इन्होंने लगभग 6 महीने कारावास की सजा काटी। इस दौरान सभी प्रदर्शनकारियों को अलग अलग जेलों में बंद किया गया व बहुत ज्यादा प्रताड़ित किया गया। खाने मे सीमेंट मिला दी जाती थी जिसके विरोध में सभी कैदियों ने जेल में भूख हड़ताल कर दी। इस तरह कई कैदियों ने अंग्रेजो की अत्यधिक प्रताड़ना से जान भी गंवा दी।

हैदराबाद जेल में कैदियों से पत्थर तोड़ने का काम करवाया जाता था। रात सोने नहीं दिया जाता था। गर्मी के मोसम में भी दिन में पीने के लिए केवल एक गिलास पानी दिया जाता था।

जेल से रिहा होने के बाद हैदराबाद से स्पेशल ट्रेन में दिल्ली पहुंचे और दिल्ली से लाहौर जाकर दोबारा पढ़ाई शुरू की।

3) **सेना में भर्ती :** 1942 में दूसरा विश्व युद्ध शुरू हो चुका था। 08 दिसम्बर1942 को ब्रिटिश इंडियन आर्मी में मेडिकल कोर में नर्सिंग हवलदार के रूप में भर्ती हुए और लगभग 15 वर्षों तक सेना में सेवा करने के बाद 29 जनवरी 1958 को सेवानिवृत्त हुए।

समाजिक कार्यो में भागीदारी: सेना से सेवानिवृत्त होने के बाद उन्होंने लगभग 15 वर्ष तक सामाजिक कार्यों में विशेष योगदान दिया तथा जैन समाज फ्री आयुर्वेदिक अस्पताल हांसी में रेजिडेंट डॉक्टर के रूप में चिकित्सा सेवा की। इसके पश्चात हांसी में ही मेडिकल प्रैक्टिस की तथा सामान्य लोगों की सेवा में लगे रहे।

सम्मान:

1) द्वितीय विश्वयुद्ध 1939 1945 के दौरान सेना में सेवा करने के उपरांत 'युद्ध सेवा/ सेना मेडल' से सम्मानित किया गया।

2) 1947 में 'इंडिपेंडेंस मैडल' से सम्मानित किया गया।

3) 1972 में भारत सरकार द्वारा श्रीमती इंदिरा गांधी ने ताम्रपत्र देकर सम्मानित किया।

4) 1985 में हरियाणा सरकार द्वारा ताम्रपत्र देकर सम्मानित किया।

5) 1997 में हरियाणा सरकार द्वारा चौ. बंसीलाल ने ताम्र पत्र देकर सम्मानित किया।

कुड़ा राम जांगड़ा के परिवार का क्रांतिकारी इतिहास

इस परिवार ने देश की स्वतंत्रता के लिए 1857 से लेकर देश स्वतंत्र होने तक अंग्रेज सरकार के विरुद्ध लड़ाई लड़ी और कुर्बानी दी। श्री बद्रीप्रसाद काला के पूर्वज श्री कूड़ा राम, श्री भिखारी राम, श्री कुशल और श्री दुन्नीराम ने देश की स्वतंत्रता के लिए के लिए अपनी जान कुर्बान की।

जगत सिंह काला सुपुत्र श्री बद्रीप्रसाद काला ने बताया कि 1857 की क्रांति के असफल होने के बाद अंग्रेजों ने दोबारा सत्ता प्राप्त कर ली और लोगों पर दमनचक्र चलाया। उन्होंने दिल्ली में लाल किले पर कब्जा कर लिया। किले की तलाशी ली गई। किले में कुछ लोगों के पत्र मिले जो दिल्ली के सम्राट बहादुर शाह जफर को लिखे गए थे। पत्र लिखने वाला एक व्यक्ति हिसार जिले के रोहनात गांव जा रहने वाला था दूसरा पुट्ठी मंगल खां का रहने वाला था। इन पत्रों के आधार पर अंग्रेज सरकार ने जिला हिसार के कलेक्टर को आदेश दिया गया कि इन दोनों व्यक्तियों को गिरफ्तार किया जाए। इन्हें गिरफ्तार करने के लिए हिसार से 12 सदस्यों की टीम जिसमें अंग्रेज अधिकारी थे सैनिकों की टुकड़ी लेकर इन लोगों को गिरफ्तार करने के लिए गांव में गए। यहां लोगों की भीड़ इकट्ठा हो गई। हांसी के लाला हुकम चंद जैन और मिर्जा मुनीर बेग ने इस इन लोगों का नेतृत्व किया और लोगों की भीड़ ने मिलकर अंग्रेजों की 12 सदस्य टीम का मुकाबला किया। इन 12 लोगों में से भीड़ ने 10 अंग्रेज अफसरों की हत्या कर दी। 2 अंग्रेज अफसर भागने में कामयाब हो गए तथा अंग्रेजों की सैनिक टुकड़ी भी मैदान छोड़कर भाग गई। यह सूचना दिल्ली भेजी गई। अंग्रेज सरकार ने इन गांवों को तोप से उड़ाने का आदेश दिया। उसके बाद 2 सैनिक टुकड़ियां तैयार की गई। एक सैनिक टुकड़ी हिसार से और दूसरी सैनिक टुकड़ी दिल्ली से इन गांव के लिए भेजी गई। दिल्ली से आने वाली सैनिक टुकड़ी को महम के पास खरकड़ा गांव में महम चौबीसी के लोगों ने घेर लिया उनसे तोप छीन ली और सैनिकों को खदेड़ दिया। लेकिन हिसार की सैनिक टुकड़ी गांव में पहुंचने में कामयाब हो गई और गांव में बहुत ही भयंकर रूप से कत्लेआम मचाया रोहनात गांव में तो जान बचाने के लिए पुरूष और महिलाएं बच्चो को लेकर कुएं में कूद गए। इस कारण बहुत लोगों की मौत हो गई।

इस दमनकारी घटना की खबर चारों ओर फैल गई। लोगों में अंग्रेजों के विरुद्ध बहुत ज्यादा गुस्सा था। उन्होंने इसका बदला लेने के लिए आसपास के शहरों में तोड़फोड़ की, आगजनी की, रेलवे स्टेशन व सरकारी दफ्तरों को जलाना शुरू कर दिया। यह आग सिरसा शहर में भी फैल गई थी। लोग सरकारी संपत्ति को तोड़फोड़ करके आग के हवाले कर रहे थे। वहां लोगों की भीड़ इकट्ठा होकर सिरसा के सरकारी खजाने को जलाने के लिए पहुंच

गई। कूड़ा राम जांगड़ा जो महम जिला रोहतक के रहने वाले थे इस खजाने में कर्मचारी थे। उसके पास खजाने की चाबियां थी।जब भीड़ खजाने के पास पहुंचने वाली थी तब कुरड़ा राम जांगड़ा खजाने की दीवार पर चढ़कर हाथ हिलाने लगा। भीड़ में शामिल कुछ लोगों ने उसे देख लिया और लोगों से उसकी बात सुनने की अपील की। उसने कहा कि मैं भी आपका ही भाई हूं। अगर तुम इस खजाने को आग लगा दोगे तो तुम्हें कुछ नहीं मिलेगा। इस खजाने में पैसे और हथियार जमा हैं वे सब जलकर नष्ट हो जाएंगे। इससे अच्छा यह है कि आप इस खजाने को लूट कर ले जाओ। यह पैसा और हथियार अंग्रेजों के विरुद्ध लड़ने में काम आएगा। इस खजाने की चाबी मेरे पास है। मैं चाबी आपके तरफ फेंक देता हूं। यह बिल्डिंग भी बच जाएगी और तुम्हारा काम भी बन जायेगा। मैं अंग्रेज सरकार को जवाब दे दूंगा कि लोगों की भीड़ में खजाने को लूट लिया है। भीड़ को यह बात समझ में आ गई। कूड़ा राम जांगडा ने चाबी भीड़ की ओर फेंक दी और वहां से फरार हो गया। लोगों ने खजाने को लूट लिया।

इस भीड़ में अंग्रेजों के मुखबिर भी थे इन्होंने इस पूरी घटना की सूचना अंग्रेज अधिकारियों को दी कि कूड़ा राम ने जानबूझकर चाबी भीड़ में फेंकी की थी।

कूड़ा राम जांगड़ा के विरुद्ध सिरसा पुलिस ने मुकदमा दर्ज कर लिया और उसकी तलाश में छापेमारी करने लगी। कूड़ा राम जांगड़ा सिरसा से भागकर अपनी एक रिश्तेदारी में गांव धनाना जिला भिवानी में छुप गया। अंग्रेज पुलिस ने इनको गिरफ्तार करने के लिए इनके घर महम जिला रोहतक में छापेमारी की। घर की तलाशी ली गई तो कूड़ा राम वहां नहीं मिला। पुलिस ने छानबीन की कि इनके घर में और कौन-कौन हैं। पता चला कि उनका एक छोटा भाई है भिखारी राम जो मकान इत्यादि बनाने का काम करता है।वह मकान बनाने के लिए किसी के वहाँ गया हुआ है। भिखारी राम अनपढ़ था और उसकी शादी भी नहीं हुई थी।पुलिस उसके काम के स्थान पर पहुंच गई और भिखारी राम को गिरफ्तार कर लिया।

इधर रोहतक जिला में अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह फैलने तथा अंग्रेज सैनिकों से तोप छिनने के कारण अंग्रेज सरकार ने इस क्षेत्र के लोगों पर बहुत जुल्म ढाए। इस क्षेत्र के 22 लोगों को रोहतक पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया था। 23वें भिखारी राम जांगड़ा को हिसार पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया। रोहतक के 22 लोगों पर तो अदालत में मुकदमा चला और इनके विरुद्ध आदेश पारित हो चुका था कि इन 22 लोगों को रोड रोलर से कुचलकर मार दिया जाए। इन 22 लोगों में पीरजादा मोहम्मद इस्लाम व उनके बेटे शेर अली खान और शाहिद खान भी शामिल थे। लेकिन भिखारी राम पर बिना कोई मुकदमा चलाए इनको सरेआम महम के आजाद चौक पर फांसी दे दी गई। जिस व्यक्ति ने कोई जुर्म नहीं किया था

ना ही किसी वारदात में शामिल था वह बेगुनाह व्यक्ति भी अंग्रेज सरकार के दमन का शिकार बना उसको फांसी की सजा मिली।

उधर कूड़ा राम को 9 महीने बाद गिरफ्तार कर लिया गया उन पर मुकदमा चला और उन को आजीवन कारावास की सजा मिली जिसके कारण उन्हें अंडमान निकोबार की सेल्यूलर जेल (काला पानी) भेज दिया गया इस जेल में 13 वर्ष बाद उनकी मृत्यु हो गई।

स्वतंत्रता सेनानी का नाम : श्री बद्री प्रसाद काला

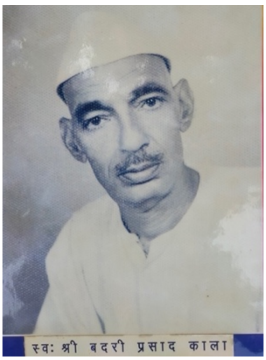

पिता का नाम: श्रीराम जांगड़ा

माता का नाम: श्रीमती पातो देवी

दादा का नाम : श्री भीखू राम

जन्मतिथि:15 सितम्बर 1916

जन्म स्थान: महम जिला रोहतक (हरियाणा)

शिक्षा: 1938 में महम के स्कूल से दसवीं की परीक्षा पास की।

पत्नी का नाम:श्रीमती फुलपति देवी

संतान: एक पुत्र श्री जगत सिंह काला

पुत्रियां

स्वतंत्रता आंदोलन में भाग : अपने पूर्वजों के बलिदान के विषय में जानकारी लेने होने के बाद श्री बद्री प्रसाद काला ने 14 वर्ष की अल्पायु में ही स्वतंत्रता आंदोलन में सक्रिय भागीदारी लेने का फैसला किया। इस कारण इन्हें लाहौर ,मुलतान, अम्बाला, रोहतक और हिसार की जेलों में कठोर यातनाएं और कारावास की सजा काटनी पड़ी।

1. 10 सितंबर 1930 को अनाज मंडी रोहतक में बाल भारती सभा के प्रदर्शन में भाग लेने के कारण श्री बद्री प्रसाद काला को पहली बार पुलिस ने गिरफ्तार किया।

2. अंग्रेज सरकार के महम पुलिस थाना के मुख्य द्वार से यूनियन जैक उतार कर तिरंगा झंडा फहराने की कोशिश के कारण पुलिस ने इनकी बहुत ही बुरी तरह पिटाई की थी जिसके कारण ये बहुत बुरी तरह घायल हो गए थे।

3. महम पुलिस थाने में इनके विरुद्ध एफ आई आर दर्ज हुई थी तथा महम थाना के खुफिया रजिस्टर में इनका नाम दर्ज है। अंग्रेज सरकार इन पर खुफिया नजर रखती थी
4. 1940 में व्यक्तिगत सत्याग्रह में भाग लेने के कारण इन्हें 1 वर्ष का कठोर कारावास व ₹100 जुर्माना की सजा हुई।
5. 15 अप्रेल 1941 को इन्हें रोहतक जेल में बंद किया गया। 2 मई 1941 रोहतक से बी आई लाहौर जेल भेज दिया। साढ़े पांच महीने कठोर यातनाएं देकर जेल से रिहा किया गया।
6. महात्मा गांधी के आह्वान पर भारत छोड़ो आंदोलन में सक्रिय रूप से भाग लेने के कारण श्री बद्री प्रसाद काला को रोहतक के एस पी ने 13 अक्टूबर1942 को गिरफ्तार करके महम थाना के लॉकअप में बंद कर दिया। यहाँ से 27 अक्टूबर 1942 को रिहा हुए। एक दिन बाद ही इन्हें दोबारा गिरफ्तार कर लिया गया। इन पर सेक्शन 129 डिफेंस ऑफ इंडिया रूल्स के अंतर्गत मुकदमा चला और रोहतक जेल में बंद कर दिया। 10नवम्बर 1942 इन्हें ओल्ड सेंट्रल जेल मुलतान जेल पाकिस्तान भेज दिया गया।28 दिसम्बर1942 को रिहा हुए।
7. 26 जनवरी 1943 को गिरफ्तार करके अंडरग्राउंड रिमांड पर लेकर भयंकर यातनाएं दी गई। इन्हें लाहौर के शाही किला मैं बंदी बनाकर रखा गया। इसके बाद अप्रैल 1943 में इन्हें मुल्तान जेल भेज दिया गया यह जेल कैदियों के लिए सबसे खतरनाक जेल थी इस जेल में इन्हें बहुत ही भयंकर यातनाएं दी गई सुबह शाम बेंत पिटाई की जाती थी।अंग्रेज अफसर और पुलिस बहुत ही बुरी तरह से पीटते थे। इन्होंने मुल्तान जेल में अंग्रेज सरकार के विरुद्ध भूख हड़ताल की जिसके कारण जेल अधीक्षक कालिया और जेल वार्डन मेहर ने कैदियों पर लाठीचार्ज करवा दिया जिसके कारण इनके बाई बाजू टूट गई।जेल में किसी भी प्रकार का इलाज नहीं मिलने के कारण वह बाजू आजीवन टेढी रही। अंग्रेजों द्वारा किए गए अत्याचारों और पिटाई के निशान उनके शरीर के विभिन्न अंगों और चेहरे पर आजीवन रहे।

इन्होंने विभिन्न आंदोलनों में भाग लिया जिसमे भारत छोड़ो आंदोलन , असहयोग आंदोलन, आसौधा सत्याग्रह औरव्यक्तिगत सत्याग्रह प्रमुख है।

आजादी के बाद 1947 में भड़के जातीय दंगों के बाद शांति बहाल करने में श्री बद्री प्रसाद काला ने महत्वपूर्ण योगदान दिया जिसे देश कभी नहीं भुला सकता है।

श्री बद्री प्रसाद का लाने हरियाणा गजट नाम का समाचार पत्र भी निकाला। श्री बद्री प्रसाद काला स्वतंत्रता संघर्ष आंदोलन में पंडित नेकी राम शर्मा पंडित श्रीराम शर्मा गोपीचंद भार्गव के सहयोगी रहे।

श्री बद्री प्रसाद काला प्रताप सिंह कैरों , पंडित भगवत दयाल शर्मा,डॉ सत्यनारायण तिवारी, बलवंत राय तायल, गोविंद राम,चौधरी चरण सिंह, कृष्ण गोपाल दत्त, मूलचंद जैन, दादा गणेशी लाल, लाला कबूल सिंह, यश(मिलाप),चौधरी देवीलाल, ज्ञानी जैल सिंह, रणवीर सिंह हुड्डा आदि स्वतंत्रता सेनानियों के साथ विभिन्न जेलों में बन्द रहे।

सम्मान: जॉइंट पंजाब के तत्कालीन मुख्यमंत्री प्रताप सिंह कैरों ने गोहाना तहसील का ऑनरेरी सब रजिस्ट्रार नियुक्त किया इस पद पर रहते हुए इन्होंने बहुत ही ईमानदारी काम अपनी कुशलता का परिचय दिया।

श्री बद्री प्रसाद काला बहुत ही साधारण और सरल तरीके से रहने वाले व्यक्ति थे। उन्हें देखकर कोई नहीं कह सकता था वे देश के इतने बड़े नेताओं में शामिल है। श्री बद्री प्रसाद काला बहुत ही कुशल वक्ता थे उन्होंने विभिन्न जनसभाओं में अपने वक्तव्य से लोगो का आकर्षण रहे। आजीवन सामाजिक कार्यों में योगदान देते रहे।1967 में यह इन्होंने महम विधानसभा सीट से कांग्रेस की टिकट पर चुनाव लड़ा लेकिन बहुत ही कम मतों के अंतर से यह जीत नहीं सके। वे 7 वर्षो तक महम के नगर पार्षद भी रहे।

पंजाब सरकार ने इन्हें सम्मान के रूप में हिसार जिला के बीड़ बबरान में साढे 12 एकड़ कृषि भूमि दी 1972 में प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने इन्हें ताम्रपत्र देकर सम्मानित किया जॉइंट पंजाब में तत्कालीन सरकार इन्हें ग्रेट स्पीकर ऑफ पंजाब की उपाधि दी।

अंग्रेज सरकार के जिस पुलिस थाना महम में श्री बद्रीप्रसाद काला की हवालात में बंद रखा गया था और भयंकर यातनाएं दी गई थी उसी को तोड़कर वर्तमान समय में उनके नाम पर सामुदायिक केंद्र बनाया गया है। महम शहर में श्री बदरीप्रसाद काला के नाम पर एक सड़क का भी नामकरण "स्वतंत्रता सेनानी श्री बदरीप्रसाद काला मार्ग" किया गया है।

श्री बद्रीप्रसाद काला की पत्नी श्रीमती फुलपति देवी भी सामाजिक वर्जनाओं को तोड़ा: हरियाणा के पुरूष प्रधान समाज मे जिस समय महिलाओं का सार्वजनिक स्थलों, खाप चबूतरों और चौपालों में जाना तो दूर इन स्थलों के पास से गुजरते समय पर्दा करना पड़ता था। उस समय इन सभी वर्जनाओं को तोड़ते हुए श्रीमती फुलपति देवी चबूतरे पर चढ़कर तिरंगा झंडा फहराने का क्रांतिकारी कदम उठाया था।

हरियाणा शहीदी दिवस 23 सितंबर को सन 1982 में जीवन यात्रा पूरी करके चले गए।

सत्यशोधक यात्रा
इतिहास को जानने का किया नायाब प्रयोग

अरुण कुमार कैहरबा

हम जिस गांव-शहर में रहते हैं, उसे कितना जानते हैं? उस स्थान को प्रचारित कैसे किया जाता है? उसकी पहचान किन चीजों से बनी है? क्या जिस तरह से उसकी पहचान को प्रचारित किया गया है, वह वास्तविक है या मिथ्या। वह पहचान पूरी है या अधूरी। ऐसे बहुत से सवाल हमारे अपने स्थान के बारे में उस समय गूंजने लगे जब 'स्वतंत्रता समता बंधुता मिशन, भारत' द्वारा स्वतंत्रता आंदोलन के अमर शहीद उधम सिंह की शहादत दिवस और कथा सम्राट प्रेमचंद की जयंती के उपलक्ष्य में कुरुक्षेत्र के कुछ महत्वपूर्ण स्थलों की यात्रा में हिस्सा लेने का मौका मिला। 'देस हरियाणा' के संपादक प्रो. सुभाष चन्द्र के नेतृत्व में निकाली गई सत्यशोधक यात्रा में कुरुक्षेत्र ही नहीं प्रदेश भर के प्रबुद्ध नागरिकों, साहित्यकारों व सामाजिक कार्यकर्ताओं ने हिस्सा लिया। यात्रा के लिए कुरुक्षेत्र किरमच रोड़ पर स्थित पहली पातशाही गुरुद्वारा, बौद्ध विहार, गुरुद्वारा दसवीं पातशाही और शेखचिल्ली का मकबरा शामिल किए गए।

यात्रा सुबह साढ़े आठ बजे तब शुरू हो गई, जब विभिन्न स्थानों से आए हुए प्रबुद्ध नागरिक शहीद उधम सिंह की प्रतिमा के पास इकट्ठे हुए। यहां पर सभी ने शहीद उधम सिंह की प्रतिमा पर श्रद्धांजलि अर्पित की। मुख्य वक्ता के रूप में एडवोकेट रजविन्द्र चंदी ने आजादी के आंदोलन में क्रांतिकारी आंदोलन और शहीद उधम सिंह पर विचार व्यक्त किए। उन्होंने कहा कि स्वतंत्रता आंदोलन के समय की चुनौतियां आज मुंह बाए हुए हैं। डॉ. कृष्ण कुमार ने आज के समय की भागमभाग को चिह्नित करते हुए अपनी कविता सुनाई। यहां से यात्रियों का जत्था गुरुद्वारा पहली पातशाही के लिए रवाना हुआ। कार्यक्रम की अध्यक्षता प्रो. टीआर कुंडू ने की। संचालन डॉ. धर्मेन्द्र फुले ने किया।

किरमच मार्ग पर स्थित गुरुद्वारा पहली पातशाही अपनी ऐतिहासिक पहचान के लिए जाना जाता है। यहां पर सन् 1515 में कवि, समाज सुधारक एवं सिक्खों के पहले आध्यात्मिक गुरु नानक देव जी पधारे थे। भाई हरकिरण सिंह ने बताया कि गुरुनानक देव जी यहां पहली उदासी के दौरान आए थे। वे सूर्य ग्रहण के अवसर पर यहां आए थे। सूर्य ग्रहण पर कुरुक्षेत्र में बड़ी संख्या में लोग आते हैं। उस अवसर का गुरु नानक देव जी ने लोगों में वैज्ञानिक चेतना एवं जागरूकता फैलाने के लिए लाभ उठाया। उन्होंने लोगों को अंधविश्वास से निकालने के लिए लंगर तैयार करवाया और लोगों में सूर्य ग्रहण सहित किसी भी अवसर पर किसी भी तरह के अंधविश्वासों से मुक्ति पाने का आह्वान किया।

गुरुद्वारे के सामने ही सत्यशोधक यात्रियों को संबोधित करते हुए डॉ. रविन्द्र गासो ने कहा कि गुरु नानक जी हमारे देश के क्रांतिकारी व्यक्तित्व हैं, जिन्होंने अपने समाज की विसंगतियों की पहचान की। उन्होंने विभिन्न स्थानों पर यात्राएं करके लोगों के साथ जनसंवाद किया और लोगों को कुरीतियों से निकालने का प्रयास किया। इस अवसर पर देस हरियाणा की सांस्कृतिक टीम से जुड़े संस्कृतिकर्मी अरुण कैहरबा, गुरदीप, विकास साल्यान, नरेश मीत, दयाल चंद व महिन्द्र खेड़ा सहित अनेक साथियों ने हरियाणवी चेतना गीत के जरिये लोगों में एकता का आह्वान किया। कार्यक्रम का संचालन देस हरियाणा टीम सदस्य विकास साल्याण ने किया।

यहां से यात्रियों का जत्था बौद्ध विहार के लिए रवाना हुआ। कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के एक सिरे पर स्थित बौद्ध विहार को बहुत कम देखा और जाना गया है। यह ऐतिहासिक धरोहर साबित करती है कि कुरुक्षेत्र बौद्ध भूमि भी है। यहां पर मुख्य वक्ता के रूप में स्वतंत्रता समता बंधुता मिशन के राष्ट्रीय संयोजक डॉ. सुभाष चन्द्र ने कहा कि बौद्ध विहार में बौद्ध धर्म का संदेश देने के साथ ही प्रैक्टिस भी करवाई जाती थी। कुरुक्षेत्र में राजा हर्ष का टीला भी है। राजा हर्ष और उनके दरबार में लेखक बाण भट्ट भी बौद्ध थे। चीनी यात्री ह्यूनसांग

यहां आए थे और उन्होंने यहां के बारे में लिखा भी है। ह्यूनसांग कुरुक्षेत्र के बौद्ध विहार के बाद यमुनानगर के चनेटी में गए थे, जहां पर बौद्ध स्तूप है।

महात्मा बुद्ध के दर्शन और कार्य करने की पद्धतियों से समानता का संदेश गया। उनके जीवन ने करुणा और तार्किकता के विचार को पूरी दुनिया में फैलाया। किसी भी देश में चले जाएं, वहां चाहे भारत का और कुछ ना मिले, लेकिन बुद्ध जरूर मिल जाएंगे। बुद्ध चीन, जापान व कोरिया सहित जितने देशों में गए, वहां पर विज्ञान और तकनीक ने बहुत ज्यादा तरक्की की है। जब इस बात पर विचार करते हैं कि आखिर इन देशों में विज्ञान व तकनीक क्यों फली-फूली तो उसमें हमें बुद्ध की सोच साफ नजर आएगी। बुद्ध तार्किक तरीके से सोचते हैं। कार्य-कारण को समझ कर जीवन में अपनाते हैं। उन्होंने बताया कि महात्मा बुद्ध के दर्शन का स्थापत्य और मूर्ति कला के विकास में अहम योगदान है। बुद्ध की 300-400 तरह की मूर्तियां मिलती हैं। वे मूर्तियां देश में मूर्ति कला के विकास में अहम योगदान देती हैं। समाज के उस तबके को बुद्ध विचार ने अपनाया जिन्हें मनुष्य होने का दर्जा भी नहीं दिया गया था। उन्होंने कहा कि गुरु नानक और महात्मा बुद्ध दोनों ने पीड़ित व कमजोर लोगों के बीच जा-जाकर सच्चाई का रास्ता दिखाया और सम्मान दिलाया। कार्यक्रम का संचालन डॉ. धर्मेन्द्र फुले ने किया।

इसके बाद हाथों में बैनर लिए हुए यात्री गीत गाते हुए गुरुद्वारा दसवीं पातशाही पहुंचे। यहां पर यात्रियों ने सिर नवाया और विश्व शांति की प्रार्थना की। गुरुद्वारा साहब में कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय पंजाबी विभाग के अध्यक्ष डॉ. कुलदीप सिंह और भाई अवतार सिंह ने

बताया कि दसवें गुरु गोबिन्द सिंह यहां पर आए थे। अन्य गुरु साहबों की तरह ही उन्होंने भी यहां पर अंधविश्वासों का पर्दाफाश किया। कुरुक्षेत्र में दस में से आठ गुरु और सात पातशाहियां आई हुई हैं। यहां पर सारी संगत ने चाय पान किया और आगे की यात्रा के लिए पैदल ही प्रस्थान किया।

हाथों में बैनर लेकर फिर पैदल यात्रा शेख चिल्ली के मकबरे के लिए रवाना हुई। इस दौरान अरुण कैहरबा, दयाल चंद जास्ट, नरेश कुमार मीत, विकास साल्याण, राज कुमार जांगड़ा, अंजू, मोनी, प्रियंका, मनीषा, नीरू, स्वाति, गुरदीप भोंसले, सूरजभान बुटानखेड़ी आदि ने गीतों व नारों के जरिये लोगों को एकता व सामाजिक सद्भाव का संदेश दिया।

शेख चिल्ली के मकबरे के प्रांगण में डॉ. राम कुमार ने मध्यकालीन इतिहास पर विस्तृत व्याख्यान दिया।

डॉ. सुभाष चन्द्र ने सभी का आभार व्यक्त करते हुए कहा कि सत्यशोधक यात्रा एक प्रयोग है। जहां हम रहते हैं, उस स्थान को जाकर जानने का। ऐसे प्रयोग अन्य स्थानों पर भी दोहराए जाएंगे। देस हरियाणा से जुड़े राज कुमार जांगड़ा ने कहा कि जल्द ही हिसार में भी सत्यशोधक यात्रा आयोजित की जाएगी। कार्यक्रम का समापन अरुण कैहरबा व दयाल जास्ट द्वारा गाए गए चेतना गीत- लड़ते हुए सिपाही का गीत बनो रे- के साथ हुआ। कार्यक्रम में नितिन ने अपनी कविता भी सुनाई।

इस मौके पर कवि डॉ. ओमप्रकाश करुणेश, सोनीपत से डॉ. इकबाल सिंह, डॉ. वीरेन्द्र नरवाल, डॉ. सुनील थुआ, करनाल जिला से आए महेन्द्र खेड़ा, नरेश कुमार मीत, मान सिंह चंदेल, धर्मवीर लठवाल, सुरेश नगली, सूरजभान बुटानखेड़ी, नीरू, सार्थक, गुरदीप भोंसले, योगेश शर्मा, गौरव, कपिल भारद्वाज, मंजीत भोला, बलजीत बटालवी, नरेश दहिया, अशोक चौहान, अमित कुमार, कृष्ण कुमार, तेलू राम व ईसरगढ़ से रामनरेश सहित अनेक साहित्यकारों व सामाजिक कार्यकर्ताओं ने सक्रिय हिस्सेदारी की।

छान्न बांधना हरियाणा की संस्कृति

हांगा पूरा लाईये-मेरी छान्न घलाईये

✍ मनजीत सिंह

पहले गांव में संसाधनों की कमी होने के कारण लोग झुग्गी झोपड़ियां बनाते थे। ये कुछ समय रहने के लिए बनाई जाती थीं। ये ग्रामीण अंचल में लोक सांस्कृतिक परम्परा एवं कला का महत्वपूर्ण हिस्सा है। लोग खेतों और बाड़ों में विश्राम करने के लिए बनाते हैं जिसे छत्त, छप्पर, छपरी, छतवर, छपरू, छान्न्, जूफड़ी आदि नाम से पुकारते हैं। इसको बनाने के लिए पराली, बाड़ी (नरमा) की कटी सुखी लकड़ी अर्थात बणछटी, छान्न एवं छप्पर बनाने के लिए बहुत जरूरी है।

जब हम गांव में छान्न बांधने काम करते हैं तो हम सबसे पहले बणछटी का प्रयोग किया करते हैं जिममें सबसे पहले बणछटी के जड़ वाली छोर को लेते हैं। बाद में हम बणछटियों को आपस में एक दूसरे का छोर जोड़ते हैं। फिर इस तरह से हम पांच सात दस बारह फुट लंबी जोड़कर बनाई जाती है बाद में उन सब के नीचे ईंट पत्थर लगा देते हैं। फिर धीरे-धीरे सरकंडे की लकड़ी के जरिए या पटेरा को जो बनी हुई दस बारह फुट लंबी बनी हुई कतारों के ऊपर बिछा देते हैं। जिस तरह हमने बनसटी के की तरह बनाते हैं। फिर नीचे और ऊपर वाले दोनों को रस्सी से बांध देते हैं। गांव वालों को बुलाकर उस बनी हुई छान्न को उसके एक तरफ के छोर को उठाते है। धीरे-धीरे सारी को सिर से ऊपर ले जाकर किसी नकुली चीज से जैसे झेलवा, एक सिंग वाला दो सिंग वाला, दो सिर वाली लकड़ी, आदि के माध्यम से उठाते हैं। फिर धीरे धीरे बिटोडा के ऊपर रख दिया जाता है।

पहले मिट्टी को दरेसी से बराबर किया जाता है और कच्ची मिट्टी से धरातल से कुछ ऊंचाई पर मिट्टी का ही एक आयताकार एवं वर्गाकार चबूतरा तैयार किया जाता है। चबूतरों के चारों कोनों पर लकडिय़ां जमीन में दस से बारह फुट लम्बी बल्ली गाड़ दी जाती हैं। दूसरी ओर दो लकडिय़ां जमीन में गाडकर तीसरी उनके उपर बांधी जाती हैं जिस पर छप्पर का सिरा टिका होता है। जमीन में गड़ी हुई लकडिय़ों को थुणी, थुण, खंभे आदि कहा जाता है। इनके उपर छप्पर टिका हुआ होता है। इसलिए इन्हें टेक या टेकणी भी कहा जाता है। छान्न छप्परी आदि शब्दों का प्रयोग रेदास, कबीर ने भी अपने साहित्य में इनका जिक्र किया है। जिस किसान के पास संसाधनों का अभाव होता है वह घास - फूंस से झोपड़ी बनाकर उसका उपयोग करता है जिसे झुंपड़ा, झुंपड़ी, झोपड़ी भी कहा जाता है। छान्न में लकड़ी के आधारों एवं थुणों के ऊपर परस्पर एक दूसरी लकडिय़ां बंधी होती हैं, जिन्हें बाही ,छान्न का सिरा कहा जाता है। झोपड़ी जो चारों कोनों में दस से बारह फुट लम्बी बल्ली के बीच में एक दो सिर वाली लकड़ी आगे पीछे दोनों तरफ गाड दिया जाता है। बीच में आगे और पीछे दो सींग वाली लकड़ी आखिरी छोरों पर गाड़ दी जाती हैं जिनकी ऊंचाई पहले गड़ी हुई लकड़ी से ऊंची होती है। कोने पर गड़ी हुई बल्लियों से अधिक ऊंची होती हैं। इन्हीं दो सींग वाली लकडिय़ों के बीच में एक लंबी बल्ली, कड़ी,बरगा फंसाकर बांध दी जाती है। जिससे छान्न एवं छप्पर का आधार ढांचा तैयार होता है। कई इलाकों में चारों तरफ पांच पांच सात सात फुट की चुनाई की जाती है चारों तरफ जोकि आगे वाली दीवार और पीछे वाली दीवार का आकार झोपड़ी नुमा होता है और जो हाथ से बनाई हुई छान्न उसके ऊपर डाल दी जाती है जिससे झोपड़ी का रूप तैयार हो जाता है। मध्य वाली बल्ली से कोनों में गड़ी बल्लियों के बीच बंधी एक अन्य बल्ली के साथ दोनों तरफ जोड़ा जाता है। बीच वाली बल्ली को आधार मानकर अनेक लकडिय़ों के छोटे - छोटे टुकड़े दोनों

तरफ वाली बल्लियों से बांधे जाते हैं जिससे छान्न एवं छप्पर का नींव के रूप ढ़ांचा तैयार हो जाता है। इसके पश्चात घास एवं फूस से जमीन पर छान्न तैयार की जाती है। सबसे पहले लंबी - लंबी लकडिय़ों को लेकर वर्गाकार एवं आयताकार, गोलाकार अर्थात कूप के रूप में भी झोपड़ी का रूप का आधार लकडिय़ों से तैयार किया जाता है। इस प्रकार दो ढांचे तैयार किए जाते हैं। एक ढांचा जमीन पर बिछाया जाता है, उस ढांचे के ऊपर घास - फूंस , पटेरा, सरकंडा, ढाभ आदि से विशेषकर दाब का प्रयोग किया जाता है। ढाभ को खेतों से पहले से ही काटकर छान्न बनाने के लिए सुखाकर तैयार कर लिया जाता है। इस प्रकार लकडिय़ों के बने इस ढांचे के ऊपर ढाभ, पटेरा,सरकंडा को व्यवस्थित तरीके से रखा जाता है। उसके ऊपर फिर लकडिय़ों का एक और जाल बनाकर रखते हैं और फिर लकडिय़ों के ऊपरी जाल को निचले जाल से रस्सियों से बांधते हैं। इनके बीच में घास - फूंस, ढाभ,पटेरा, सरकंडा ईख की पात्ती को भी सुचारू रूप से बांध दी जाती है। इस प्रकार लकड़ी के ढांचे को जिस भी आकार में छप्पर तैयार किया जाता है। बाद में इस छप्पर को अनेक लोगों की सहायता से उठाकर, जिसमें जेली,टोंगली, लम्बी डण्डी के माध्यम से उठाकर छान्न के बनाए हुए नींव रूपी ढांचे रखकर वहां पर गड़ी हुई बल्लियों के बांध दिया जाता है। आगे और पीछे से छान्न एवं छप्पर ज्यादातर खुले रहते हैं। साधनों का प्रयोग गरीब किसान गरीब व्यक्ति ही प्रयोग करता है या फिर खेत में बनाने के लिए स्थान का प्रयोग किया जाता है छान्न का प्रयोग झोपड़ी कूप छप्पर आदि के प्रयोगों में है। और कहते हैं कि हांगा पूरा लाईये, मेरी छान्न घलाईये।

कुछ ऐसा ज़हर नफ़रत का पिलाया,
हमें सूझा न फिर अपना पराया,
बसाई थी कभी हम ने जो बस्ती,
उसी बस्ती को हमने ख़ुद जलाया।

- **बलबीर सिंह राठी**

गुरु गोबिंद सिंह के साथ कंधे से कंधा मिलाकर लड़ने वाले साढ़ौरा निवासी पीर बुद्धु शाह

✍ गगनदीप सिंह

वर्तमान दौर में धर्म के नाम पर झगड़े और दंगे करवाए जा रहे हैं। भारत में हिंदू, मुसलमान, सिखों के बीच दंगों का इतिहास बहुत अधिक पुराना नहीं है। मूल रूप से जब भी कोई धर्म राजधर्म बना है या उसने राज का संरक्षण हासिल किया है तो उसने अपने वर्चस्व के लिए, शासन को कायम रखने के लिए व लोगों को बांटने का काम किया है। आज भी देश में कट्टरपंथी राजनीतिक ताकतें खासतौर से सत्ताधारी दल धर्म के नाम पर लोगों को बांटने का काम कर रहा है। ऐसे दौर में हमें ऐसी सख्सियतों को याद करना जरूरी हो जाता है जिसने धार्मिक एकता की मिसाल कायम की हो। ऐसी ही एक महान सख्सियत है साढ़ौरा के पीर बुद्धू शाह जो गुरु गोबिंद सिंह के साथ मिलकर पहाड़ी राजाओं के खिलाफ लड़े थे।

देश की फासीवादी ताकतें जानबूझ कर सिख और मुसलमानों के अंदर फूट डालने की कोशिशें भी कर रही हैं। हालांकि उनको इसमें कामयाबी नहीं मिल रही। इसकी बड़ी वजह ये है कि सिख गुरुओं का आंदोलन तमाम तरह की धार्मिक कट्टरता, असमानता और

जात-पात के खिलाफ था। जितना जोर हिंदू धर्म की बुराइयों के खिलाफ लड़ने में संतों ने लगाया उतना ही मुस्लिम धर्म की बुराइयों के खिलाफ सूफी संतों ने लगाया। दरअसल पूरा भक्तिकाल और सूफी काल अपने-अपने धर्म के अंदर आई बुराइयों के खिलाफ था और भक्तिकाल के संतों और सूफी पीर फकीरों के अंदर वैचारिक एकता थी। गुरु ग्रंथ साहिब में जहां भक्तिकाल के संतों की वाणियां मौजूद हैं वहीं सूफी पीर फकीरों की वाणियों को भी स्थान दिया गया है। सढ़ौरा के पीर बुद्धू शाह का परिवार इसकी मिसाल है। बंदा सिंह बहादुर ने साढ़ौरा को सिख राज की पहली राजधानी बनाया था, उनकी सेना में हिंदू, मुसलमान और सिख धर्मों के सैनिक भर्ती हुए थे, जिन्होंने मुगल सत्ता के खिलाफ लड़ाई लड़ी थी। सिक्खों ने मुसलिम धर्म के खिलाफ लड़ाई नहीं लड़ी, वह लड़ाई मुगल सत्ता के खिलाफ थी। बहुत सारे मुसलमान तो गुरुओं के अनुयायी थे। मलेरकोटला के मुसलमानों ने गुरु गोबिंद सिंह का साथ दिया था। उन्होंने साहिबजादों के खिलाफ गवाही देने से मना कर दिया था।

पीर बुद्धु शाह का जीवन

सढ़ौरा और सिख इतिहास में पीर बुद्धु शाह का योगदान बेमिसाल है। पीर बुद्धु शाह का जन्म 13 जून 1647 को हुआ था। उनका असली नाम सैयद बदरउद्दीन था। वे गुरु गोबिंद सिंह के बहुत ही अजीज थे। गुरु गोबिंद सिंह खुद सढ़ौरा में चार बार आए। बुद्धु शाह जी व गुरु दशमेश जी की पहली मुलाकात 1671 में हुई थी तब वह 24 साल के थे। बुद्धु शाह वैसे तो 4000 हजार एकड़ जमीन, हवेलियों और सरायों के मालिक थे, लेकिन उन्होंने सब कुछ त्याग दिया था और वह एक पीर के तौर पर अल्हा, इंसानियत, प्रकृति, पशु-पक्षियों और प्राणीमात्र से प्रेम में लीन हो गए थे।

पीर बुद्धु शाह के खानदान की सढौरा में बसने की भी दिलचस्प कहानी है। वे जिस सैयद घराने से तालुक रखते हैं वे गुरुनानक जी से प्रभावित होकर, मक्का-मदीना से यहां पर उनके साथ ही आए थे। ऐसे लगभग 200 परिवार थे जो पंजाब में आकर बसे। उन्हीं में आगे चलकर मिया मीर हुए जिन्होंने अमृतसर में हरमंदर साहिब की नींव रखी, उसी में पीर बुद्ध शाह, पीर भूरे शाह और हुसैनी आदि हुए। बुद्धु शाह जी का नाम उनके वालिद गुलाम शाह और अम्मी नसीरां ने सैयद शाह बद्दरुद्दीन रखा था।

जब पांच साल की उम्र में गुरु गोबिंद सिंह पहली बार पंजाब आए तो लखनौर में पीर बुद्ध शाह की मुलाकात गुरु गोबिंद सिंह से हुई थी, क्योंकि उनके स्वागत में पीर भीखण जी, भूरे शाह जी और मीर मुहंमद जी आए तो वह उनके साथ थे, बुद्धु शाह जी भीखण जी के चेले और भूरे शाह के गुरु भाई थी। मीर मुहमंद जी ने ही माछीवाड़ा इलाके में बाल गुरु गोबिंद सिंह जी को उर्दू, फारसी और अरबी का ज्ञान दिया।

औरंगजेब ने किसी कारण से अपने 500 पठानों को अपनी फौज से निकाल दिया और साथ में यह हुक्म भी दिया कि जो इनको नौकरी पर रखेगा या शरण देगा वह मुगल सल्तनत के खिलाफ बगावत मानी जाएगी। इनमें पांच सेनापति थे खाला खान, भीखन खान, हयात खान और निजाबत खान। बताया जाता है ये यमुनानगर के दामला इलाके के थे। पीर बुद्धु शाह ने मानवता के नाते गुरु गोबिंद सिंह जी को इनको शरण देने की अपील की। ये नौकर गुरु जी के पास पांवटा साहिब में लंबे समय तक रहे, लेकिन जब 1687 में भंगाणी का युद्ध हुआ तो इन्होंने धोखा दिया और काला खान को छोड़ कर शेष सब कोई न कोई बहाना बनाकर भाग गए।

जब पीर बुद्ध शाह ने ये बात सुनी तो उनको बहुत दुख हुआ। वह खुद अपने 700 मुरीदों और परिजनों को लेकर भंगाणी के युद्ध में गुरु गोबिंद सिंह का साथ देने पहुंच गए। इसमें उनके चार बेटे, दो भाई और एक भतीजा था। उन्होंने ऐलान किया कि – जो अल्हा का प्यारा है वह अल्हा की लड़ाई के लिए उठे, यह जंग शैतानों के खिलाफ लड़ी जा रही है। इस युद्ध का वर्णन भाई संतोख सिंह इस तरह बयान करते हैं

जब घमासान जंग हो रही थी तो पीर बुद्धु शाह जी आपने जत्थे के योद्धाओं को साथ लेकर राजा फतेह शाह की फौज पर टूट पड़े, जो कि गांव को एक तरफ से घेर कर खड़ी हुई थी। पीर जी ने जंग की दांव-पेंच तय कर उनको आगे बढ़ने से रोक दिया। दोनों के बीच घमासान युद्ध हुआ। दोनो तरफ भंयकर मारकाट हुई। लाशों के ढेर लग गए। लोहे से लोहा खड़का। आसमान से तीरों की बारिस होने लगी। पीर के मुरीदों ने दुश्मनों को नेस्तनाबूद कर दिया। हमला इतना भयंकर था कि बहुत सारे पहाड़ी अपनी जान से हाथ धो बैठे और बाकी जान बचाकर रफूचक्कर हो गए, पहाड़ों और पेड़ों की ओट में चले गए।

हालांकि इस हमलें में सैकड़ों सिक्खों के साथ पीर बुद्ध शाह जी के 500 मुरीद, एक भाई और एक भतीजे ने शहादत का जाम पिया। बुद्धु शाह ने लड़ाई का हाल सुनाया। तब गुरु गोबिंद सिंह जी अपने बालों में कंघा कर रहे थे। पहुंचे हुए गुरु ने पहुंचे हुए पीर को फरमाया, साई जी आपने बहुत खिदमत की है, आप जी की सेवा अमोल है, कुछ मांगों, तो पीर जी ने कहा आपका दिया सब कुछ है, किसी चीज की कमी नहीं। पीर जी का ध्यान गुरु जी के कंघे और बालों की तरफ गया, तो पीर जी ने बहुत विनम्रता और प्यार से उस कंघे की मांग की। गुरु जी ने उनको वह कंघा, पवित्र बाल, छोटी पगड़ी और मुरीद जवानों के लिए 5000 रुपये पीर बुद्ध शाह को सौंपे।

काहन सिंह नाभा लिखते हैं - पीर बुद्ध शाह सढ़ौरा इलाके की एक महान सख्शियत थे, लोग उनके एक इशारे पर जान वारने के लिए तैयार बर तैयार रहते थे। लेकिन 1701 से 1704 ई. तक पहाड़ी राजाओं व मुगलों की की तरफ से आनंदपुर साहिब के चारों

तरफ दुश्मनों का घेरा कसता गया। दिल्ली सरकार ने उसमान खान को नवाब बना कर सढ़ौरा भेजा, उसने बहुत जुलम किए। बुद्धू शाह की सारी जमीन कुर्क कर ली और वहां पर 150 परिवारों का कत्लेआम करके 400 पठानों को बसा दिया। ... 21 मार्च 1704 को पीर जी की जायदाद को आग लगा दी और उनको गिरफ्तार कर छतबीड़ (बनूड़) के जंगलों में ले गये वहां पर उनकी बोटी-बोटी काट कर शहीद कर दिया गया।

इसके पांच साल बाद 1709 में उसमान खान को उसके किये की सजा दी गई, बंदा सिंह बहादुर ने सढ़ौरा के बीचों बीच फांसी पर लटका कर गुरु गोबिंद सिंह के हुकम को पूरा किया। और जालिम लुटेरे निजाम का अंत कर जनता के राज की नींव रखी।

गुरु नानक के साथ मक्का से आया था पीर बुद्धू शाह का परिवार

46. Sadhora : Mosque of Abdul Wahab

पीर बुद्धु शाह के बड़े बुजुर्ग शाह अब्दुल वाहिद कुतुब-उल-कुतुब (हजरत निजामुद्दीन के पौत्र) गुरु नानक से कई मुलाकतें हुई थी। उनसे प्रभावित कर ही यह परिवार सढ़ौरा आकर बसा था और उनके साथ भगत सदना भी साथ रहे थे। गुरुनानक भी खुद कई बार सढ़ौरा आए थे। सन् 1669 में औरंगजेब भी सढौरा आया था उसने शाह अब्दुल वाहिब का मकबरा तैयार करवाया था। इसके अंदर जामुनी रंग में आठ पंक्तियों की फारसी कविता

भी लिखी गयी है, जिसकी पहली पंक्ति में ही माहयूद्दीन आलमगीर शाह (औरंगजेब) लिखा हुआ है। इसके नीचे मस्जिद निर्माण की तारीख 1080A.H/1669-70 लिखा हुई है।

यह खानदान सूफी विचारधारा की चिश्ती शाखा से संबंध रखता था। ये परिवार गुरु नानक के मक्का मदीना के दौरे के बाद उनके साथ भारत आया था। इस परिवार के साथ सूफी विचारधारा की कादरी शाखा के दो बड़े पीर बगदाद से चलकर सढ़ौरा पहुंचकर गुरु नानक के मुरीद बने। औरंगजेब के बड़े भाई दारा शिकोह के गुरु, शेख चेहली (अब्दुल रहीम बनूड़ी) का भी कादरी शाखा से संबंध था और सढ़ौरा का रहने वाला था। इनके संबंध साई मियां मीर से भी थे। शेख चेहली का मकबरा आज भी थानेसर में मौजूद है।

स्रोत

- कहान सिंह नाभा कृत महान शब्द कोष
- देस हरियाणा पत्रिका सुरेंद्र पाल का लेख
- लोहगढ़ सिख राज्य की राजधानी (हरियाणा साहित्य अकादमी)
- Mughal Monuments in the Punjab and Haryana, Subhash Parihar
- अंबाला, करनाल आदि के गजेटियर्स

मज़हबी नफ़रतों के सौदागर,
प्यार के घर उजाड़ आते हैं,
राहतें उन के वश की बात नहीं,
वो मुसीबत ज़रूर लाते हैं।

बलबीर सिंह राठी

श्रेष्ठ साहित्य मन की धुंध और जाले साफ करता है

✍ डॉ. अशोक भाटिया से अशोक बैरागी की बातचीत

अशोक बैरागी : अपनी पारिवारिक पृष्ठभूमि के विषय में कुछ बताइए?

डॉ. अशोक भाटिया : मेरी पारिवारिक पृष्ठभूमि 1947 के भारत-पाक विभाजन की त्रासदी से जुड़ी है। मेरे पिता जी पश्चिमी पाकिस्तान से लुटे-पिटे खाली हाथ भारत आए थे। शुरू में रोटी के लिए उन्होंने कई रोजगार बदले और कई जगहें बदली। फिर पिताजी ने एक दुकान करके अपने आप को स्थापित किया। हम पांच भाई बहन थे। हम सबको माता-पिता ने अच्छे ढंग से शिक्षित किया। हमने मेहनत और ईमानदारी खासतौर पर स्वाभिमान उन्हीं से सीखा। मेरी माँ हालाँकि चार पढ़ी थी पर उनमें दूरदृष्टि और यथार्थपरक सोच थी। पिताजी भी दस पढ़े पर उस माहौल में यहाँ नौकरी मिलना बड़ा मुश्किल था। अतः संघर्ष की शुरुआत हमने अपने बचपन से और घर से ही की थी। वही जीवन मूल्य आज तक हमें रोशनी देते हुए हमारे साथ चल रहे हैं।

अशोक बैरागी : आपकी निगाह में वर्तमान परिप्रेक्ष्य में साहित्य का उद्देश्य क्या होना चाहिए?

अशोक भाटिया : दरअसल, परिप्रेक्ष्य तो परिवेश को देखने का एक दृष्टिकोण होता है और साहित्य का लक्ष्य कमोबेश हमेशा एक ही रहता है। 1947 से पहले, आजादी प्राप्त करना था। जिस दौर में माखनलाल चतुर्वेदी ने 'पुष्प की अभिलाषा' लिखी, उसी से प्रेरित होकर हजारों युवा सरकारी नौकरी छोड़कर स्वाधीनता के आंदोलन में कूद पड़े थे। मैथिलीशरण गुप्त उपदेश और मनोरंजन की बात भी कहते हैं। 'केवल मनोरंजन न कवि...। ' लेकिन अब कुछ चीजें बदल गई हैं। मनोरंजन तो दूरदर्शन के हिस्से आ गया। प्रगतिशील लेखक संघ के सम्मेलन (लखनऊ,1936) में प्रेमचंद ने साहित्य का उद्देश्य बताया कि बेहतर साहित्य वह है पाठक में जो गति और बेचैनी पैदा करें, सुलाए नहीं। यह गति और बेचैनी उनके राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य की सोच थी। उनका साहित्य सब वर्गों की संवेदना को जगाता है, उसे विस्तार देता है और व्यावहारिक समझ को बढ़ाता है।

अशोक भाटिया

वास्तव में जो साहित्य स्वतन्त्रता, समानता व न्याय जैसे मूल्यों को प्रतिष्ठित करने के लिए जद्दोजहद करता है, मैं समझता हूँ वह साहित्य श्रेष्ठ साहित्य है। और साहित्य का यही लक्ष्य होना चाहिए।

अशोक बैरागी : कहते हैं साहित्य जनता के लिए लिखा जा रहा है। इसमें गरीब किसान-मजदूर का दुख दर्द भी है। मैं पूछना चाहता हूँ कि एक किसान जो दिन-रात खेतों में काम करता है, मजदूर दिहाड़ी करता है और घरेलू औरत दिन-रात कामकाज में पिसती है। ऐसे में क्या हाशिए पर पड़े अंतिम व्यक्ति तक साहित्य पहुँच रहा है?

अशोक भाटिया : दरअसल आपका यह प्रश्न साहित्य की आदर्श स्थिति से जुड़ा है। साहित्य अंतिम व्यक्ति तक पहुँचना चाहिए पर ऐसा नहीं हो रहा। इसके लिए लेखकों की भी कुछ सीमाएँ हैं। वास्तव में आजकल साहित्य के केंद्र बड़े शहरों में सिमट गए हैं। पहले बनारस और इलाहाबाद थे। अब दिल्ली है। मुझे काशीनाथ की एक कहानी 'अपना रास्ता लो बाबा' याद आ रही है। एक बुजुर्ग गाँव से शहर में डॉक्टर के पास आता है। जो उसी गाँव का है। लेकिन डॉक्टर और उसके बच्चे उसे टाल देते हैं। ठीक वही स्थिति यहाँ है। हमने गाँव को टालकर उसे अपने रास्ते और अपनी हालत पर छोड़ दिया है। और जो लेखक हैं वह शहरों में विराजमान हो रहे हैं। ग्रामीण चेतना निश्चित रूप से साहित्य में कमतर हुई है। आप आश्चर्य करेंगे कि पंजाबी साहित्य में किसानों की आत्महत्याओं को लेकर दो बड़े शानदार उपन्यास आए। लेकिन हिंदी में कुछ साल पहले केवल संजीव का 'फांस' उपन्यास आया था। जहाँ तक मजदूर की बात है वह असंगठित क्षेत्र है। पिछले दिनों कोरोना के कारण उनकी पीड़ा हम सब ने देखी। पर उनकी कोई आवाज कहीं भी बुलंद नहीं हुई। तो साहित्य में भी आमजन पूरी तरह उपेक्षित है। साहित्य मोटे तौर पर मध्यवर्ग के हाथों में है फिर भी वह जहाँ अपनी सीमाएँ तोड़ता हुआ जन-जन तक पहुँचता है तो अपनी छाप भी छोड़ता है। लेखक को समाज में निकलकर लोगों से सक्रिय संपर्क-संवाद करना होगा तभी उसका साहित्य विविधतापूर्ण और समृद्ध हो पाएगा।

अशोक बैरागी : एक लेखक और प्रकाशक के संबंधों को आप किस प्रकार देखते हैं?

अशोक भाटिया : देखिए, वैसे तो इनके संबंध सौहार्दपूर्ण होने चाहिएँ क्योंकि दोनों को ही एक दूसरे की जरूरत है। इसका दूसरा पक्ष यह भी है कि प्रकाशन एक व्यावसायिक उपक्रम है। जब प्रकाशक अपना लाभ अधिक देखता है तो लेखक के हित को दरकिनार कर देता है। तब दोनों के हितों में टकराव होता है। ऐसी स्थिति में दोनों को एक दूसरे के

हितों और स्थितियों को जानना और समझना चाहिए। अब कई बार लेखक और प्रकाशक के बीच देर-सबेर और खींचतान वाली स्थिति तो बन जाती है क्योंकि नए लेखकों को पता नहीं होता कि प्रकाशक उसकी रचना को कितने समय में छापेगा या नहीं छापेगा? वह टालता रहता है। मैंने देखे हैं अच्छे-अच्छे लेखकों की किताबें सात-सात, आठ-आठ साल तक पड़ी रहती हैं क्योंकि उनके सक्रिय संपर्क नहीं है, वे आईएएस ऑफिसर नहीं हैं या वे विश्वविद्यालयों में नहीं पढते-पढ़ाते। तो रिश्तो में टकराहट तो स्वाभाविक है, पर एक-दूसरे के हितों को समझ कर चलना चाहिए। नए लेखकों को भी प्रकाशक-जगत की स्थिति, संघर्ष को जानने और बहुत कुछ नया सीखने के लिए बाहर निकलना चाहिए। फणीश्वरनाथ रेणु के आंचलिक उपन्यास 'मैला आंचल' को पहले प्रकाशकों ने छापने से मना कर दिया था। आज वही हिंदी के सर्वश्रेष्ठ आंचलिक उपन्यासों में माना जाता है।

अशोक बैरागी : आलोचना और समीक्षा में मुख्य अंतर क्या है?

अशोक भाटिया : देखिए अशोक जी, आलोचना अपने आप में एक विधा है। जैसे कथा, कहानी और नाटक हैं। हाँ, आलोचना एक अलोकप्रिय विधा है क्योंकि इसमें सारे विचार हैं, इसमें चिंतन है इसमें विश्लेषण है। और इस तरफ ध्यान भी कम ही दिया गया है। हाँ, समीक्षा को हम आलोचना की एक शाखा कह सकते हैं। जब हम एक पुस्तक अथवा रचना पर केंद्रित होकर अपनी कोई टिप्पणी तैयार करते हैं तो वह समीक्षा है। जबकि आलोचना में साहित्य की एक पूरी धारा, विधा या प्रवृत्ति उसके केंद्र में रहती है। लेकिन कई बार समीक्षा करते-करते आलोचना वाली चीजें उसमें शामिल हो जाती हैं। मोटे तौर पर आलोचना का दायरा और परिप्रेक्ष्य समीक्षा से बड़ा होता है। लेकिन एक बात दोनों में रहती है वो है पाठक को रचना के युगबोध और साहित्यिक सरोकारों से परिचय कराना।

अशोक बैरागी : कहते हैं साहित्य यथार्थ की अनुभूति से उपजता है लेकिन छायावादी काव्य कल्पना प्रसूत है जिसे आधुनिक साहित्य का 'स्वर्णयुग' भी कहते हैं। इनमें से कौन-सा साहित्य समाज के लिए अधिक प्रासंगिक है?

अशोक भाटिया : दरअसल मैं दो-तीन बातें पहले स्पष्ट कर दूँ कि एक तो हिंदी में कुछ निर्णयात्मक वक्तव्य या टिप्पणियाँ की जाती रही हैं। जैसे 'सूर सूर तुलसी ससी,...। ' अब सूरदास को सूर्य और तुलसी को चंद्रमा किस आधार पर मानें? प्रश्न तो उनके परिवेश और परिप्रेक्ष्य का है। उनके साहित्य के सूक्ष्म विश्लेषण से ही अंतिम निर्णय निकलेगा। अब दूसरी बात छायावाद को 'स्वर्णयुग' भी कहा गया। वास्तव में अपने यहाँ एक चलन है कि हम एक को उभार कर, दूसरे को कमतर नजर से देखने लगते हैं। आप थोड़ा पीछे देखिए भारतेंदु युग में भारतेंदु हरिश्चंद्र और उस युग के जो दूसरे लेखक थे, बालकृष्ण भट्ट, प्रतापनारायण मिश्र, अंबिकादत्त व्यास ठाकुर जगमोहन सिंह आदि, उन्होंने हिंदी को आधुनिक भावभूमि

पर प्रतिष्ठित किया, उसे यथार्थ की ओर लेकर आए, रीतिकालीन छाया से और ब्रज के प्रभाव से बाहर निकाला। ऐसे में क्या उनका महत्व कम है? आप उसे स्वर्णयुग कहें ना कहें... भारतेंदु हरिश्चंद्र का नाटक 'अंधेर नगरी' जैसा तीखा राजनीतिक व्यंग्य किसी और नाटक में कहाँ मिलता है।

अब प्रासंगिकता की जो बात आपने कही बड़ी वाजिब है कि जो जीवन के अनुभवों से निकला साहित्य वही ज्यादा उपयोगी होगा। अब हमें कुछ छायावादी काव्य के संदर्भ देखने होंगे। आप निराला की कुछ कविताएँ देखिये जैसे 'भिक्षुक', 'विधवा' या 'दीन' ये कविताएँ यथार्थ के कठोर धरातल से निकली हैं। ये कल्पना की उपज नहीं है। 'परिमल' संग्रह में शामिल और दूसरी कविताएँ भी अपने युगबोध से जुड़ी हुई हैं। अब 'कुकुरमुत्ता' की आवाज आज भी उतनी ही प्रासांगिक है जितनी उस समय थी। इसमें गुलाब के माध्यम से किस तरह पूंजीवादी चरित्र को उभारा है। 'अबे, सुन बे, गुलाब...इतरा रहा है कैपीटलिस्ट।'

अब आपकी कल्पना प्रसूत वाली बात भी वजनदार है। प्रसाद 'कामायनी' में यह प्रश्न उठाते हैं कि जो देव थे वे विलासी हो गए और विनाश शुरू हो गया। लेकिन उन्होंने भी श्रद्धा के जरिए मानवतावादी संस्कृति को उभारने का प्रयास किया है। लेकिन यह बात पाठक तक क्यों नहीं पहुँच पाती, इसके भी कई कारण हैं। एक तो अधिक कल्पना प्रसूत होना। यह फैंटेसी की रचना है और फैंटेसी भी एक विशेष किस्म की कल्पना ही होती है। रूपक का अधिक प्रयोग और कश्मीरी शैव दर्शन पर पूरी तरह से खरा उतरने का प्रयास करते हुए 'कामायनी' लिखी गई है। तो उसमें बाकी कई चीजें तिरोहित हो जाती हैं जिनको उभारना चाहिए था। लेकिन जब दार्शनिकता हावी हो जाती है तब ऐसी दिक्कत आती है। सुंदर कल्पना ने 'कामायनी' को महाकाव्य तो बना दिया, लेकिन साधारण पाठक से दूर चला गया।

मैं यह भी मानता हूँ कि आज हम छायावादी भाषा में नहीं लिख पाएंगे लेकिन उस युग में भी सब चीजें देखनी होती हैं। अब पंत जी की 'परिवर्तन' कविता अपने युगबोध को व्यक्त करती है। तो जो हमें बेहतर साहित्य मिलता है उसकी श्रेष्ठता और सकारात्मक पक्षों को रेखांकित करना आलोचक और इतिहासकार का प्रथम दायित्व होता है।

अशोक बैरागी : लोकविश्वास और अंधविश्वास में कैसे अंतर किया जाए। माने इनकी कसौटी का आधार क्या है?

अशोक भाटिया : देखिए, लोकविश्वास हमारे जीवन और कार्य व्यापार में घुले मिले रहते हैं। वे हमारे रीति रिवाज, हमारी संस्कृति और जीवनशैली का हिस्सा भी हैं। यह जीवन से नीरसता को हटाकर उसमें उमंग भरते हैं। हमारे जीवन को सुंदर बनाते हैं। अब जैसे मुंडेर पर कौवा बोले या रसोई में गृहणी के हाथ से गीला आटा गिर पड़े तो यह मानना कि घर

में कोई पाहुन आने वाला है, कभी पूर्व में ऐसा संयोग रहा होगा तो यह विश्वास प्रचलन में आ गया। ऐसा लोकविश्वास कोई हानिकारक नहीं है। लेकिन कभी-कभी लोकविश्वास भी विवेकहीनता के कारण अंधविश्वास में धकेल देता है। उससे बचने की जरूरत है।

दरअसल भारतवर्ष अशिक्षा और पिछड़ेपन के कारण आकंठ अंधविश्वास में डूबा रहा है। अब इस संकट के कई पहलू हैं। एक तो यह कि एक पढ़ा-लिखा आदमी भी अंधविश्वासी है। उन पर गर्व करता है। दूसरा इससे भी बड़ा पहलू हमें पता ही नहीं कि ये अंधविश्वास है। तो इसके खिलाफ लड़ेंगे कैसे? अब तीसरा पहलू भी है कि हम उससे लड़ना भी नहीं चाहते। हम उसके आनंद में डूबे हैं। मेरे एक मित्र ने कहा था कि 'जिंदगी से तर्क गायब हो गया, जानवर से फर्क गायब हो गया। ' अब अगर हम विवेक और तर्क के आधार पर चलेंगे तो हम इनसे बच पाएंगे। अंधविश्वास के बारे में मोटे तौर पर कह सकते हैं कि जहाँ प्रमाण होने पर भी किसी बात को न मानना या बिना प्रमाण किसी बात को मान लेना ही अंधविश्वास है। यह एक सामाजिक बीमारी है। पिछले दिनों एक मेरी पुस्तक आई है, 'अंधविश्वास: रोग और इलाज'। यह अंधविश्वास के विभिन्न पहलुओं पर सूक्ष्मता से विचार करती है।

अशोक बैरागी : मुझे लगता है अपने समाज में कुछ जाति विशेष भी हैं जो जाति और धर्म के नाम पर लोगों को गुमराह करके अपने स्वार्थ सिद्ध कर रही हैं। वे अपनी श्रेष्ठता के नाम पर लोगों में अंधविश्वास फैलाते हैं।

अशोक भाटिया : हाँ बिल्कुल। प्रेमचंद की एक पंक्ति देखिए, 'सांप्रदायिकता हमेशा संस्कृति की दुहाई दिया करती है। उसे अपने असली रूप में निकलने में शायद लज्जा जाती है।'

अशोक बैरागी : सर, विमर्श आधारित साहित्य क्यों आवश्यक है, क्या मुख्यधारा के साहित्य में विमर्श नहीं है? जैसे प्रेमचंद, नागार्जुन, मुक्तिबोध, निराला...आदि के साहित्य को देखें तो...।

अशोक भाटिया : देखिए, विमर्श तो साहित्य में हमेशा ही रहा है। विमर्श का अर्थ है - किसी स्थिति, प्रवृत्ति या विचार के पक्ष-विपक्ष को समग्रता से देखना। विमर्श को हम आलोचना से जोड़ सकते हैं। प्रेमचंद, नागार्जुन या मुक्तिबोध आदि के साहित्य में क्या खूबी है, यह तो विचार विमर्श करने से ही पता लगेगा। दलित या स्त्री विमर्श की आवश्यकता इसलिए भी है क्योंकि यह दोनों सदियों से ही दोयम दर्जे के माने जाते रहे हैं और अब भी संघर्षरत हैं। अभी आगे भी बहुत बेहतर परिदृश्य होने की संभावना भी नहीं है। राजेंद्र यादव ने 'हंस' के अपने संपादकीयों में मुख्य रूप से इनकी इसी स्थिति को उभारा है। विमर्श ही साहित्य की श्रेष्ठता को हमारे सामने रखता है और रचना संबंधी हमारी समझ को बेहतर

बनाता है। यह हमारे मन मस्तिष्क की धुंध और जाले साफ करता है। इस समय भी हम साहित्य को लेकर विमर्श ही कर रहे हैं क्योंकि इसके बिना चीजें स्पष्ट नहीं होती।

अशोक बैरागी : क्या केवल दलित ही दलित विमर्श का साहित्य लिख सकते हैं?

अशोक भाटिया : देखिए, दलित के लिए पहले 'शूद्र' शब्द का प्रयोग होता था। यह वर्ग समाज में सदियों से पीड़ित, उपेक्षित और अपमानित रहा है। सन 1818 तक स्थिति यह थी कि कोई भी शूद्र घर से निकलता था तो उसे गले में एक मटकी डालकर रखनी होती थी ताकि थूक आए तो उसमें ही डाले। उससे पहले भी आप जानते हैं कि वेद की वाणी अगर उसके कानों में पड़ जाए तो उसके कानों में पिघला शीशा...। इससे बड़ी पीड़ा की बात और क्या होगी? 19वीं शताब्दी में तो श्रावणकोर (तमिलनाडू) के राजा ने दलित स्त्रियों के स्तन ढकने पर भी प्रतिबंध लगा रखा था ताकि राजा की विलासिता और कामुकता कायम रहे। यह स्थिति थी हमारे समाज की। प्रेमचंद का साहित्य स्वाधीनता से पूर्व भारतीय समाज का प्रतिनिधित्व करता है। इसमें सभी जाति, धर्म संप्रदाय आ जाते हैं। अब 'ठाकुर का कुंआ' का जोखू, 'सद्गति' का दुखी चमार, 'कफन' के घीसू-माधव या 'गोदान' की सिलिया ये सब दलित पात्र हैं और उस समय के समाज के सच को सामने रखते हैं। समाज के किसी अन्य वर्ग या पक्ष पर कोई भी लेखक कलम चला सकता है किन्तु दलित सैकड़ों वर्षों से अपमान, जलालत और पीड़ा का भुक्तभोगी रहा है। इसलिए उसकी कलम से निकला साहित्य ही ज्यादा प्रामाणिक होगा।

अशोक बैरागी : भाटिया जी, अपने यहाँ दलित साहित्य की शुरुआत कैसे...?

अशोक भाटिया : दलितों को सैकड़ों वर्षों तक हिंदू समाज व्यवस्था में सबसे निचले पायदान पर होने के कारण न्याय, शिक्षा, समानता और स्वतंत्रता आदि मौलिक अधिकारों से वंचित रखा गया। हिंदी में दलित साहित्य की शुरुआत उधर मराठी साहित्य से हुई। जब दया पवार ने अपनी आत्मकथा 'अछूत' लिखी। हालाँकि इससे पहले भी मराठी में दलित साहित्य लिखा जा चुका था। शरण कुमार लिम्बाले ने 'अक्करमाशी' नाम से आत्मकथा लिखी और इनका प्रभाव यह पड़ा कि इधर हिंदी लेखकों में भी छटपटाहट और उत्तेजना पैदा हुई। अब ये खुलकर आत्मकथाएँ लिखने लगे। मोहनदास नैमिशराय की 'अपने-अपने पिंजरे' हो, ओमप्रकाश बाल्मीकि की 'जूठन', सूरजपाल चौहान की 'तिरस्कृत', तुलसी राम की 'मुर्दहिया' हो या सुशीला टाकभौरे की 'शिकंजे का दर्द' सभी ने अपनी आत्मकथाओं में अपने साथ हुए अन्याय, अत्याचार, शोषण, जातीय भेद, और पाखंड को निर्भीक होकर लिपिबद्ध करना शुरू कर दिया। अब तो आत्मकथाओं के अलावा हिंदी की अन्य विधाओं में भी दलित साहित्य बड़ी सशक्त उपस्थिति दर्ज करा रहा है। और वो भी पूरी प्रामाणिकता के साथ।

अशोक बैरागी : दलित साहित्य पर कुछ आक्षेप भी लगाए जाते हैं, क्यों?

अशोक भाटिया : हाँ, एक तो आक्षेप यह लगाया जाता है कि इनके साहित्य में वह कलात्मकता नहीं है जो होनी चाहिए। दूसरा, उसमें करुणा और पीड़ा तो है पर वह कोमलता या लालित्य नहीं है, पर उसका कारण भी स्पष्ट है, क्योंकि वे जिस आक्रोश, पीड़ा, शोषण, और घुटन को जी रहे हैं, उसी को लिख रहे हैं। जब कभी समाज की स्थितियाँ बदलेंगी और उनका आक्रोश ठंडा होगा तो उनमें वह कलात्मकता और वो दूसरी चीजें भी निश्चित रूप से आएँगी।

अशोक बैरागी : व्यक्ति के साहित्यिक संस्कार अभ्यास है या वरदान?

अशोक भाटिया : देखिए, संस्कार तो घर के परिवेश से ही मिल जाते हैं। हम उन्हें वरदान भी कह सकते हैं। इसमें हम प्रतिभा की भी बात किया करते हैं, लेकिन प्रतिभा को निखारने के लिए कुछ चीजों की आवश्यकता होती है। केवल वरदान या प्रतिभा से बात नहीं बनती। अगर अपने दृष्टिकोण का विकास करना है तो उसके लिए साहित्य का अध्ययन जरूरी है क्योंकि भारतीय और वैश्विक साहित्य की जानकारी तो अध्ययन से ही मिलेगी। लेकिन लेखन की भाषा में कुशलता निरंतर अभ्यास से ही आती है। अब प्रेमचंद के पहले उपन्यास ‘वरदान ' और अंतिम उपन्यास ‘गोदान' की भाषा देखिए, दोनों में जमीन-आसमान का अंतर है। प्रेमचंद की भाषा में लगातार परिष्कार होता गया। हाँ, इसमें मैं एक शब्द 'अवसर' और जोड़ना चाहूँगा क्योंकि अगर प्रतिभावान को भी अवसर नहीं मिलेगा तो उसकी प्रतिभा कुंठित हो जाएगी। प्रतिभा को अधिक प्रखर होने या निखरने के लिए अवसर की उपलब्धता अनिवार्य है।

अशोक बैरागी : लघुकथा, कहानी और उपन्यास में कौन से तत्व हैं जो इन्हें एक-दूसरे से अलग करते हैं?

अशोक भाटिया : मैं समझता हूँ अगर हम इनको तत्वों की बजाय फलक के आधार पर देखें तो चीजें ज्यादा अच्छी तरह से स्पष्ट होंगी। देखिए, फलक का विस्तार उपन्यास में सबसे ज्यादा होता है और उसमें जीवन के एक पक्ष का बड़ा भाग और उसके विविध आयाम रहते हैं। ऐसा भी नहीं है कि इसमें पूरे का पूरा जीवन ही आ जाए, अगर ऐसा होता तो उपेंद्रनाथ अश्क को 'गिरती दीवारें' या 'गर्म राख' क्यों लिखने पड़ते। और चेतन एक पात्र है, जो एक उपन्यास से दूसरे उपन्यास में उतरता है फिर भी वह अधूरा है। इस तरह उनके छह उपन्यास हैं। फिर उपन्यास में जीवन के एक बड़े भाग और उसके विविध आयामों को सामने लाने के लिए इसमें हम उपवृतांत या उपकथाएँ बुनते हैं। जबकि लघुकथा का फलक आमतौर पर छोटा होता है। आमतौर पर छोटा इसलिए कि हम बड़े फलक वाली लघुकथाएँ भी लिख सकते हैं, पर यह लेखक के कौशल पर निर्भर करता है। अगर मैं तुलनात्मक दृष्टि

से कहूँ कि उपन्यास एक भरा पूरा वृक्ष है तो लघुकथा एक खिला हुआ पुष्प है और कहानी इनके बीच की स्थिति में है, जिसका अनुमान आप लगा सकते हैं। कई बार एक प्रसंग, स्थिति या विचार सूत्र भी पर्याप्त होता है, जिसे हम अपने कौशल द्वारा रचनात्मक परिणति तक पहुँचा देते हैं। आप टालस्टाय का उपन्यास 'वार एंड पीस' देखें, उसमें कई पीढ़ियों की कहानी है और सौ से भी ज्यादा पात्र हैं। अब लघुकथा में तो ऐसा नहीं हो सकता और शायद यह कहानी में भी संभव नहीं है।

अशोक बैरागी : सुनने में आ रहा है कि लघुकथा अपनी स्वर्णजयंती मना रही है। माने वह 50 वर्ष की हो गई है। क्या 50 वर्ष (1970 से) पहले लघुकथा नहीं थी? थी तो किस रूप में?

अशोक भाटिया : हा...हा..हा...। (पहले खूब हंसे फिर बोले) देखिए, गीत और कथाएँ विश्व में शुरू से ही मौजूद रहे हैं। और यह कहना कि कथाएँ थी ही नहीं...यह गलत है। ऐसा कहना परंपरा को नकारना बल्कि मानव अस्तित्व को नकारना है। कई बार हम अपने कार्य या मत का महत्व बताने के लिए अंतर्विरोधों का भी सहारा ले लेते हैं। एक तरफ तो हम 1876 के आसपास भारतेंदु हरिश्चंद्र की हास्य-व्यंग्य रचना 'परिहासिनी' को लघुकथा संग्रह बता रहे हैं और दूसरी तरफ 1971 से लघुकथा का आरंभ मानकर 2021 में उसकी स्वर्णजयंती मना रहे हैं। यह एक अंतर्विरोध ही है। अगर हम सही ढंग से देखें तो लघुकथा की इधर की 50 वर्ष की यह यात्रा समकालीन लघुकथा की है।

सन् 1973 में 'सारिका' का लघुकथा विशेषांक आया। 'सारिका' क्योंकि कहानी की केंद्रीय और व्यावसायिक पत्रिका भी थी, इसका दूरगामी प्रभाव यह हुआ कि अब देखते ही देखते लघुकथा साहित्य के पटल पर छा गई। ऐतिहासिक दृष्टि से देखें तो लघुकथा के सूत्र वेदों-पुराणों में से भी निकाल सकते हैं। उसे लघुकथा का वैदिक या पौराणिक रूप भी कह सकते हैं। दूसरी तरफ, इसे आठवें दशक की उपज कहें तो यह भी एक अति है। वास्तव में बीसवीं सदी के आरंभ में लघुकथा यथार्थ के साथ जुड़कर नए रूप में सामने आने लगी थी। 1901 में माधवराव सप्रे की रचना 'एक टोकरी भर मिट्टी' (इसे हिंदी की पहली कहानी भी माना जाता है) को पहली लघुकथा माना जाता है।

मैं आपको 1970 से पहले लेकर जाना चाहता हूँ। जहाँ से लघुकथा सक्रिय रूप में सामने आई। वह समय था बीसवीं सदी के चौथे दशक का। उस समय के प्रमुख कथाकारों ने लघुकथा के क्षेत्र में रचनात्मक और सकारात्मक भूमिका निभाई थी। सबसे पहले प्रेमचंद का नाम लेते हैं फिर प्रसाद, सुदर्शन, माखनलाल चतुर्वेदी, कन्हैयालाल मिश्र, विष्णु प्रभाकर, इन्हीं में बाद में आनंद मोहन अवस्थी भी जुड़े। उसके बाद फिर हरिशंकर परसाई, श्यामनंदन शास्त्री, रामनारायण उपाध्याय आदि भी लघुकथा लेखन से जुड़े। सबसे पहले

लघुकथा बोध कथा या नीति कथा के रूप में प्रचलित थी और लघुकथा उससे जद्दोजहद कर रही थी, फिर उन तत्वों को छोड़कर यथार्थ के कठोर धरातल पर आई। अब प्रेमचंद और परसाई तो शुरू से ही यथार्थ की भावभूमि पर लिख रहे थे जबकि जगदीशचंद्र मिश्र ने अंत तक बोध और नीति का धरातल नहीं छोड़ा। इस तरह लघुकथा अनेक पड़ावों को पार करते हुए यहाँ तक पहुँची है। यह विवरण मैंने अपनी पुस्तक 'नींव के नायक' में भी लिखा है। क्योंकि हम अपनी परंपरा पर टिके हैं, जड़ हैं, तो वृक्ष है, नहीं तो वृक्ष का क्या अस्तित्व है।

अशोक बैरागी : भाटिया जी, हम कई बार पढ़ते हैं कि अमुक रचना में कालदोष है। यह क्या होता है? और कब आता है?

अशोक भाटिया : आजकल इसका खूब आतंक है। वास्तव में कालदोष का आतंक फैलाया गया है। दरअसल जब रचना की मूलभूत जानकारी नहीं होती तो ऐसे गैरजिम्मेदार प्रत्यय उछाले जाते हैं। और इससे उस विधा को हानि होती है। अब देखिए, नाटक में समय, स्थान और परिवेश की एकरूपता की बात होती है। मान लो सन् 1950 का कोई नाटक है तो उसके पात्र, वेशभूषा, भाषा, रंगमंच सज्जा, और परिवेश उसी समय के अनुकूल होगें। वैसे ही लघुकथा को आप चाहें तो एक कालखंड से आगे भी ले जा सकते हैं। लेकिन कुछ लोगों ने यह समझा कि लघुकथा भी एक ही कालखंड की होनी चाहिए और अगर एक ही समय और क्षण की हो तो उसमें कालखंड दोष नहीं होता। जबकि ऐसा नहीं है। यह तो रचनाकार के सामर्थ्य और उसके कौशल पर निर्भर करता है कि वह रचना की जरूरत के मुताबिक कितने बड़े कालखंड को या कितनी पीढ़ियों को रचना में समेटता है। मधुदीप की एक लघुकथा है 'समय का पहिया घूम रहा है', इसमें रचनाकार का कौशल देखने योग्य है। इसमें चार अलग-अलग समयों को लिया है और उद्देश्य की दृष्टि से उसमें गजब की एकान्विति है। कालदोष नाम की कोई चीज नहीं होती। आधुनिक लघुकथाकारों को चाहिए कि उनकी रचना में जो कथा प्रसंग हैं, पात्र हैं और जो भाषा है, उनमें तारतम्य हो, कहीं बिखराव न हो।

अशोक बैरागी : आज लघुकथा एक सशक्त विधा के रूप में प्रतिष्ठित हो चुकी है। तो ऐसे में क्या लघुकथा को शब्द सीमा में बांधा जा सकता है?

अशोक भाटिया : जब हम रचना को यथार्थ की भावभूमि में डूब कर वहाँ से रचना निकालते हैं तो वहाँ शब्द सीमा का कोई प्रश्न नहीं उठता। वास्तव में किसी भी गद्य रचना को शब्द सीमा में नहीं बांधा जा सकता। काव्य में भी वहाँ, जहाँ छंदबद्ध रचना हो। गीत-नवगीत में वर्ण और अक्षरों की मर्यादा रहती है। मुक्तछंद की कविता में दो पंक्तियों से लेकर दो हजार तक की पंक्तियाँ कितनी भी हो सकती हैं। यह लेखक के सामर्थ्य पर निर्भर करता

है। उपस्थित रचनाओं के आधार पर ही सिद्धांत और निष्कर्ष निकलते हैं, फिर दूसरी रचनाओं के आधार पर यही निष्कर्ष अमान्य भी हो जाते हैं। बाहर के सिद्धांत या निष्कर्ष कभी पूर्णरूप से किसी रचना पर लागू नहीं होते। नाटक को लेकर अरस्तू ने जो भी सिद्धांत दिए, उन पर शेक्सपियर के नाटक खरे नहीं उतरते। अब शेक्सपियर को बाहर तो नहीं कर सकते।

लघुकथा दो-चार वाक्यों से लेकर हजार शब्दों की सीमा भी पार कर जाती है। सबसे छोटी लघुकथा रमेश बत्तरा की है देखिए, "ए रफीक भाई, सुनो! उत्पादन के सुख से भरपूर, नींद की खुमारी लिए जब मैं घर पहुँचा तो मेरी बेटी ने एक कहानी कही- एक लाजा है, वो बहुत गलीब है। ' दूसरी तरफ, अरुण कुमार की कहानी 'गाली' (कथादेश द्वारा पुरस्कृत) और अरुण मिश्र की 'पावर विंडो' जैसी लघुकथाएँ हजार शब्दों के पार जाती हैं। तो लघुकथा में जो स्पेस है हम उसे खुद ही कम क्यों करें। आठवें दशक में जो लघुकथाएँ 'सारिका' और दूसरी पत्रिकाओं के माध्यम से आई वे आमतौर पर दो सौ-ढाई सौ शब्दों तक हैं। अब शब्दाकार बढ़ रहा है। इसका मतलब यह है कि रचनाकार को स्पेस की जरूरत है ताकि यथार्थ के बड़े हिस्से को अधिक सशक्त ढंग से रचना में अभिव्यक्त कर सके। और किसी रचना के बाह्याकार को लेकर उदार होना रचना के हित में ही होता है।

अशोक बैरागी : लघुकथा के क्षेत्र में आप बहुत ही अनुशासित और प्रतिबद्ध लेखक हैं। आपका कार्य जितना परिमाणगत विस्तृत है, गुणवत्ता में भी उतना ही उच्चकोटि का है। आप नए लघुकथाकारों को भी खूब पढ़ते होंगे। इनकी रचनाओं के बारे में आपके क्या विचार हैं?

अशोक भाटिया : पिछले पंद्रह-बीस वर्षों से नए-नए लघुकथाकार आ रहे हैं, जिनमें महिलाओं की संख्या भी काफी है। इस संदर्भ में यह एक अच्छा लक्षण है कि महिलाएँ समाज और परिवार के बारे में क्या और किस तरीके से सोचती हैं? इससे लघुकथा के परिदृश्य में विविधता और रचनात्मकता के नए आयाम भी सामने आएँगे। कुछ नए लेखक तो वर्तमान यथार्थ को बड़े खुलेपन से, बिना किसी संकोच के और कलात्मक स्पर्श के साथ अभिव्यक्त कर रहे हैं। ये हमारी पीढ़ी से बिल्कुल अलग हैं और आगे हैं। यह कहने में मुझे कोई संकोच नहीं है। इतना खुलापन हमारी पीढ़ी में नहीं है। इन नए रचनाकारों में हरभगवान चावला, दीपक मशाल, कांता राय संध्या तिवारी, कुमार संभव जोशी, चित्रा राणा राघव और महेंद्र कुमार की रचनाएँ शामिल हैं। और भी नाम हैं, जो इस समय नहीं सूझ रहे। इनकी रचनाओं का ताना-बाना, सोच, भाषाई ताजगी साथ ही साहित्यिक और कलात्मक स्पर्श भी बहुत सुन्दर है। इन्हीं कारणों से इनकी रचनाएँ अलग से नजर आती हैं और ध्यान खींचती हैं। इधर कुछ जल्दबाजी वाले रचनाकार भी हैं, जो धड़ाधड़ किताबें निकाल रहे

हैं। वे प्रशंसा चाहते हैं और उन्हें ऐसे पीठ थपथपाने वाले लोग भी मिल जाते हैं। ऐसे में श्रेष्ठ साहित्यिक और कलात्मक संभावनाओं के द्वार बंद होने लगते हैं।

अशोक बैरागी : आप लघुकथाकार के रूप में प्रतिष्ठित हैं। इसके अलावा आपने और किन-किन विधाओं में क्या-क्या लेखन किया है?

अशोक भाटिया : सर्वप्रथम मैंने भी कविताएँ लिखी और 1979 में 'नवागत' (संपादित) नाम से काव्य संकलन निकाला। फिर लघुकथा मुझे अपने साथ उड़ाकर ही ले गई और कविता पीछे रह गई। मेरा पहला काव्य-संग्रह 'सुखे में यात्रा' (2003) और दूसरा 'कठिन समय में हम' (2021) आया। अस्सी के दशक में व्यंग्य को लेकर मैं खूब छपा। प्रेम जनमेजय और मधुसुदन पाटिल ने मेरे व्यंग्यओं को खूब सराहा और छापा। लेकिन मेरा पहला व्यंग्य-संग्रह 'लोकल विद्वान' 2016 में आया। कुछ बाल उपयोगी पुस्तकें - 'समुद्र का संसार' 1990 में आई, जिसे हरियाणा साहित्य अकादमी ने 'कृति पुरस्कार' दिया। फिर दो भागों में 'हरियाणा से जान पहचान' आई। इधर बाल साहित्य में मैंने एक नया प्रयोग किया है। 'बालकांड' नाम से बाल लघुकथाओं की पुस्तक लिखी है। जिसके केंद्रीय पात्र बच्चे ही हैं, घोड़ा, खरगोश, चिड़िया आदि नहीं। इसका दूसरा भाग 'ताना-बाना' नाम से आ चुका है। आलोचना के क्षेत्र में भी पुस्तकें आई हैं जिनमें -' समकालीन हिंदी कहानी का इतिहास' (2000 तक की हिंदी कहानी पर केंद्रित), 'सूर काव्य: विविध आयाम' आई। इसे एनबीटी ने वर्ष 2012 की चुनिंदा 51 पुस्तकों में शामिल किया। इसके अलावा एक समाजोपयोगी पुस्तक है 'अंधविश्वास: रोग और इलाज'। पर सच तो यह है अशोक भाई, लघुकथा ने मुझे कभी नहीं छोड़ा।

अशोक बैरागी : आपके सृजन के मुख्य सरोकार क्या-क्या हैं?

अशोक भाटिया : किसी साहित्यकार के लिखने का उद्देश्य ही तय करता है कि उसके सरोकार क्या हैं। आचार्य मम्मट ने प्रयोजन बताए थे ‘काव्यं यशस्येअर्थकृते ...। ' यहाँ यश और अर्थ की प्राथमिकता के संदर्भ में मेरी विनम्र असहमति है। मेरा मानना है कि साहित्य लेखन व्यावहारिक ज्ञान, अकल्याणकारी तत्वों के क्षय हेतु, बेहतर समाज की सोच और सपनों को साकार करने के लिए लिखा जाता है। सौंदर्य और चेतना का विस्तार भी इसी से जुड़े हैं। मानवीय संवेदना को विस्तार देने वाला साहित्य ही श्रेष्ठ होता है। मेरा भी यही प्रयास रहता है कि न्याय आधारित और समतामूलक समाज की स्थापना के मद्देनजर मेरे साहित्य से समाज में नई सोच और प्रगतिशील मूल्यों को संरक्षण मिले। मेरी रचनाओं से पाठक का संवेदनागत और चेतनागत विस्तार हो और उन्हें एक सही दिशा मिले तो लगेगा कि मेरा उद्देश्य पूरा हो गया।

अशोक बैरागी : आप अपनी रचना प्रक्रिया के विषय में कुछ बताइए?

अशोक भाटिया : यह बड़ा जटिल प्रश्न है। कई बार तो ऐसा होता है कि आपने सोचा और उसमें कल्पना आदि दूसरी चीजें जुड़ी, संवेदना का स्पर्श हुआ और रचना कागज पर आ गई। मेरी 'रंग' लघुकथा ऐसी ही है, जिसमें मैंने कोई संशोधन नहीं किया। जब हम न्याय आधारित बेहतर और समतामूलक समाज का सपना देखते हैं तो जाहिर है कि हमारी रचना प्रक्रिया में भी वही चीजें काम करती हैं। मेरे विचार से हमारी रचना प्रक्रिया लेखन से पहले की प्रक्रिया ज्यादा है और लिखने के बाद की कम। लिखने के लिए रचना का उत्स या सूत्र किसी स्थिति, किसी पात्र, किसी घटना, दृश्य, विचार से भी हो सकता है। या कभी-कभी निपट काल्पनिक यथार्थ से भी आ सकता है। अब देखना यह है कि जो सूत्र आपने पकड़ा है उसमें रचनात्मक प्रवृत्ति की संभावना कितनी है। मेरी कविता की एक पंक्ति है- 'हर बादल में नहीं होता भार सहने का माद्दा।' यह आपके दृष्टिकोण पर निर्भर करता है कि उस रचना सूत्र में आप कविता, कहानी या लघुकथा में से किस की संभावना देखते हैं।

रचना प्रक्रिया कई द्वन्द्वों से होकर गुजरती है। इसमें यह भी जरूरी है कि पाठक और समाज अगर हमारे सामने रहेंगे तो रचना का स्वरूप अधिक बेहतर होगा। अन्यथा रचना केवल हवा हवाई भी हो जाती है, जो पाठक पर अपना असर नहीं छोड़ती। हालाँकि पाठक भी कोई तयशुदा चीज नहीं है। वह किस वर्ग का, किस समय का, कहाँ का और कितना पढ़ा लिखा होगा। जर्मन के प्रमुख कवि बर्तोल्त ब्रेख्त कहते हैं, 'लेखक को रूप के बारे में सोचते हुए उसके वस्तु और विचार पक्ष पर ही ध्यान देना चाहिए, क्योंकि रूप या विधा तो एक माध्यम है, महत्वपूर्ण तो विचार है। ' कई बार ऐन मौके पर लिखते समय भी रचना में बदलाव हो जाता है लेकिन लिखने के बाद काट-छांट करना रचना प्रक्रिया का बहुत जरूरी अंग है। इसमें संकोच और मोह नहीं करना चाहिए।

अशोक बैरागी : एक बार आपने कहा था कि रचना को लिखने के बाद उसे बड़ी निर्ममता से काटना चाहिए।

अशोक भाटिया : बिल्कुल, आपने जो 'निर्ममता' शब्द कहा इसमें मैं एक बात और जोड़ दूँ कि रचना को लिखने के बाद उसे छोड़ दें और फिर महीने-दो महीने बाद उसे सिर्फ पाठक की दृष्टि से पढ़ें। यह एक कठिन काम है क्योंकि हमारा रचनाकार, हमारा आलोचक और हमारा मोह बीच में घुसेगा। जब हम रचना को नि:संग होकर पाठक की दृष्टि से पढ़ेगें तो उसमें बहुत-सी चीजें बेहतरी की माँग करती नजर आएंगी।

अशोक बैरागी : आजकल हर चीज अपनी समग्रता या दीर्घता को छोड़कर लघुता में सिमट रही है। चाहे वह विचार हों, संस्कार, व्यक्तित्व, संस्कृति, और चाहे भाषा भी। क्या लघुकथा भी इसी साहित्यिक क्षरण की उपज है?

अशोक भाटिया : समय और स्थितियाँ होती हैं। कभी समय था हमारे यहाँ महाकाव्य खूब लिखे जाते थे। भक्तिकाल के सोलहवीं सदी में 'पद्मावत' और 'रामचरितमानस' से लेकर बीसवीं सदी के 'साकेत' और 'साकेत संत' तक महाकाव्यों की एक समृद्ध परंपरा रही है, लेकिन अब वो समय नहीं रहा। ललित निबंधों की धारा भी क्षीण हो गई, तो क्या इस बदलाव को साहित्यिक क्षरण कहा जाए?...नहीं! शायद यह ठीक नहीं होगा। हाँ, चीजें लघुता में अवश्य सिमट रही हैं। इसके पीछे कुछ अस्वस्थ कारण भी हैं। लघुकथा का आज जो स्वरूप है वह सत्तर के दशक की परिस्थितियों की उपज है। उसने आकार तो परंपरा से लिया लेकिन युवा पीढ़ी को अपनी बात कहने के लिए एक सशक्त माध्यम थमा दिया। कमलेश्वर ने 'सारिका' का लघुकथा विशेषांक निकाल कर इसकी जमीन पुख्ता कर दी। दरअसल, रचनाओं को लेकर जो धैर्य होना चाहिए वह पहले से कम नजर आता है। अब सब कुछ ही छोटा होता जा रहा हो ऐसा भी नहीं है। राजेंद्र यादव 'हंस' में प्राय: लम्बी कहानियाँ देते रहे हैं। अभी पिछले दिनों ज्ञान चतुर्वेदी का एक व्यंग्यात्मक उपन्यास 'स्वांग' आया है, जो करीब 400 पृष्ठों का है। दूसरा, योगेंद्र आहूजा बड़े चर्चित कथाकार हैं। अभी उनकी एक लंबी कहानी 'डॉक्टर जिवागो' आई है। और फिर उदय प्रकाश तो लंबी कहानियों के लिए ही जाने जाते हैं।

असल प्रश्न तो हमारे ट्रीटमेंट या समाज को देखने के नजरिए का है कि हमारे भीतर समाज के लिए कितना ताप, तड़प और बेचैनी है। उसे कलात्मक परिणति देने में हम कितनी गहराई में उतरते हैं। यानी हमारा सामर्थ्य और कौशल कितना है। यह जरूर है कि लघुकथा को सरल मानकर भी खूब लिखा जा रहा है और मोटे तौर पर यह साहित्यिक क्षरण की उपज दिखती है पर है नहीं। हालाँकि लघुकथा में भी ऐसे लेखक हैं जिनका कोई सामाजिक विजन नहीं है। और ऐसा लेखन जल्द ही खारिज हो जाता है। किसी कविता की पंक्ति है- 'सारे बेहतरीन झूठ वक्त के साथ दफन हो जाते हैं। ' लघुकथा में जो अपने समय का सच है, जिसका वस्तुपरक आधार है, जिसका साहित्यिक और कलात्मक पक्ष है, बचेगा तो बस वही बचेगा।

अशोक बैरागी : आज का युवा साहित्य से कटा-कटा सा रहता है। किताबें पढ़ने की जो एक परंपरा थी, वह खत्म-सी हो गई है। इसका आप क्या कारण मानते हैं?

अशोक भाटिया : आपकी बात तो सही है, पर उसके कारण भी कई हैं। एक तो जीवनयापन लगातार कठिन हो रहा है और रोजगार के लिए संघर्ष का बढ़ते जाना भी इसका एक कारण है। और मैं नि:संकोच कह सकता हूँ कि सत्ता द्वारा साहित्य और नई सोच को पीछे धकेला जा रहा है। दूसरा, लेखकों के कुछ निजी स्वार्थ और सीमाएँ होती हैं। ऐसे लेखक भी बहुत कम हैं जो दूसरों का श्रेष्ठ साहित्य पढ़ते हैं। हालाँकि इंटरनेट पर सब कुछ

सुलभ हो गया है। लेकिन फिर भी पढ़ना कम हुआ है। हावी होते सोशल मीडिया द्वारा भी साहित्य को पीछे धकेला जा रहा है। इसका इलाज यह हो सकता है कि छोटी, उपयोगी और कम कीमत की पुस्तकें निकाली जाएँ। लेखकों को भी चाहिए कि वे अपने साहित्य को लेकर समाज में सक्रिय संपर्क करें। दोनों के बीच परस्पर संवाद होने पर ही कुछ परिदृश्य बदलेगा।

अशोक बैरागी : हिंदी की समाहार शक्ति गजब की है। वर्तमान में अनेक भाषाओं के शब्दों का प्रचलन इसमें हो गया है। संकरण की यह जो स्थिति है आप इसे कितना सही या गलत मानते हैं?

अशोक भाटिया : मेरा यह मानना है कि दूसरी भाषाओं के प्रचलित शब्द हिंदी में आएंगे तो इससे अपनी भाषा समृद्ध होगी लेकिन उसे अगर फैशन के रूप में लाएंगे तो भाषा में विकृति आएगी। विश्व की सभी भाषाओं में दूसरी भाषाओं के शब्द मिलते हैं। अंग्रेजी से अगर फ्रेंच, लेटिन और जर्मन भाषाओं के शब्दों को निकाल दें तो वह कहीं भी खड़ी नहीं होगी। वे हर वर्ष विश्व की चुनिंदा भाषाओं के प्रचलित शब्दों को अपने यहाँ शामिल करते हैं और भाषाएँ इसी तरह विकास किया करती हैं। जो ज्यादा शुद्धतावादी दृष्टि से सोचते हैं, वे दरअसल भाषा की जमीनी सच्चाइयों को नहीं जानते। भाषायी विकास के पीछे भौगोलिक और ऐतिहासिक कारण हमेशा रहे हैं। कबीर ने भाषा को 'बहता नीर' कहा है क्योंकि जब तक वह बहता है तो उसमें आसपास की वनस्पतियों के गुण उसमें आ जाते हैं। वैसे ही भाषा है।

10 वीं-11वीं शताब्दी तक भारत में संस्कृत व प्राकृत भाषाएं थी, जब मुग़ल आए तो वह अपने साथ फारसी ले आए। फारसी भी स्थापित हो गई। फिर अपने यहाँ अवधी और ब्रज आदि क्षेत्रीय भाषाएँ उभरने लगी। 1574 में जब तुलसीदास ने 'रामचरितमानस' लिखा तो उसमें एक हजार से अधिक शब्द फारसी के आ गए, क्योंकि वे शब्द तब प्रचलन में थे। आजकल भी कोर्ट-कचहरी में भी सैंकड़ों शब्द अरबी-फारसी के प्रयोग होते हैं, क्योंकि ये शब्द हमारी संस्कृति में रच बस कर हिंदी के हो गए हैं। ऐसा ही अपने यहाँ अंग्रेजी शासन और अंग्रेजी भाषा के आने पर हुआ। मेरा मानना है कि इससे भाषा की शब्द संपदा समृद्ध होती है। भाषाओं के संकरण के संदर्भ में रामविलास शर्मा 'नवजागरण और हिंदी' में एक उदाहरण देते हुए लिखते हैं- 'टेकब त टेक न त गो' (लेना है तो लो नहीं तो जाओ)। इससे स्पष्ट है कि अंग्रेजी हमारी क्षेत्रीय भाषाओं में प्रवेश कर रही थी।

इसके लिए तकनीकी संस्थानों, आयोगों हिंदी निदेशालयों के अनुवादकों और अधिकारियों को चाहिए कि हिंदी भाषा को आम जन समाज की भाषा से जोड़कर उसे कृत्रिम शब्दावली से बचाएँ। अब चाय के लिए 'दुग्ध शर्करा मिश्रित पेय', साइकिल के

लिए 'द्विचक्रिका' और रेल के लिए 'लोहपथगामिनी' जैसे शब्दों का प्रयोग हास्यास्पद ही लगेगा। जबकि इनके प्रचलित शब्दों का लेखन-पठन हर दृष्टि से सरल और सुविधाजनक है। मुझे शुद्धतावादियों का राग बड़ा ही आधारहीन लगता है। मेरा मानना है कि हिंदी को शुद्ध बनाने की बजाय इसका अधिक से अधिक प्रयोग करें, उसे विमर्श की भाषा बनाएँ, वैज्ञानिक और तकनीकी शब्दावली से जोड़कर रोजगार की भाषा बनाएँ तभी इसका भविष्य बेहतर होगा।

अशोक बैरागी : हिंदी भारत सहित विश्व के सभी देशों में लगातार बढ़ रही है। यह विश्व में तीसरे नंबर की सबसे अधिक बोले जाने वाली भाषा है, फिर भी हिंदी राष्ट्रभाषा और सर्वोच्च न्यायालय की भाषा क्यों नहीं बन पा रही?

अशोक भाटिया : हिंदी बेशक घोषित राष्ट्रभाषा नहीं है परंतु व्यावहारिक रूप से हिंदी लगातार पंख फैला रही है। हिंदी को वैज्ञानिक, प्रशासनिक और प्रौद्योगिकी में पोषण-संरक्षण मिलना चाहिए। आप रेडियो, टेलीविज़न, समाचार पत्र, पत्रिकाएँ, बाजार और सोशल मीडिया कहीं भी देखिए हर जगह हिंदी ही छाई हुई नजर आती है। इससे कह सकते हैं कि हिंदी लगातार बढ़ रही है और बेहद सुंदर भाषा है। लेकिन दिक्कत कहाँ है...?

वास्तव में हिंदी को अतिशुद्धता और कृत्रिमता ने मारा है। जब-जब हिंदी को शुद्धता की जंजीरों में बाँधा गया, तब-तब वह लोकप्रियता के पायदान पर नीचे खिसक गई। जहाँ तकनीकी ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र की बात है वहाँ यह केवल अनुवाद की भाषा बन कर रह गई है। क्योंकि जब वैज्ञानिक तकनीकी शब्दावली आयोग बना तो अनुवादको ने बड़े ही कृत्रिम अनुवाद किए।

देश की सर्वोच्च अदालत में भी हमें अपनी भाषा में न्याय नहीं मिलता, यह भी आम जनता के साथ सीधा-सीधा अन्याय है। एक गाँव-देहात का सीधा-सादा आदमी वहाँ जाकर न बोल पाता है, न ही सुन समझ पाता है। वहाँ अंग्रेजी का बोलबाला है। वहाँ हिंदी भाषा क्यों नहीं बोली जाती जबकि हिंदी हमारी मातृभाषा और संपर्क भाषा है। कारण वही...दृढ़ इच्छाशक्ति का अभाव। जिस दिन यह इच्छाशक्ति आ जाएगी उसी दिन से चीजें बदलना शुरू हो जाएंगी।

संपर्क - 9466549394

स्कूलों में देशभक्ति कविताएं व बच्चे

✍ **नरेश सैनी**

यह बच्चा कैसा बच्चा है
यह बच्चा काला काला सा
यह बच्चा भूखा भूखा सा
यह बच्चा सुखा सुखा सा
या बच्चा किसका बच्चा है

इब्ने इंशा की यह नज़्म भूख से तड़पते उन हजारों बच्चों की आवाज है जो आज भी स्कूल तक नहीं पहुंच पाते। स्कूल में पढ़ने वाले बच्चे जब यह कविता पढ़ते हैं तो वे इन भूखे व गरीब बच्चों के साथ एक रिश्ता सा बना लेते हैं।

कविताएं बच्चों को संवेदनशील बनाती हैं और एक संवेदनशील बच्चा ही भविष्य का एक अच्छा नागरिक बन सकता है। एक अच्छा नागरिक ही किसी देश की सबसे बड़ी

ताकत होता है। इस मायने में स्कूल में पढ़ाई जाने वाली कविताएं काफी महत्वपूर्ण हैं। बचपन में स्कूल में पढ़ते समय गीत सुनते थे

नन्ना मुन्ना राही हूं
देश का सिपाही हूं

तब सोचते थे की शायद सीमा पर बंदूक लेकर खड़ा होना ही देशभक्ति होती है। जैसे जैसे बड़े हुए तो स्कूली किताबों में झांसी की रानी, सुभाष चंद्र बोस व भगत सिंह के बारे में कविताएं पढ़ी तो महसूस हुआ की देश भक्ति बंदूक के अलावा कुछ और भी है।

स्कूल के एक कार्यक्रम में कविता सुनी थी - साबरमती के संत तूने कर दिया कमाल, दे दी हमें आजादी बिना खडग बिना ढाल - यह सुनकर पहली बार महसूस हुआ कि बिना गोली बंदूक के भी देश के लिए कुछ किया जा सकता है।

देशभक्ति और कविताओं का आपस में गहरा संबंध रहा है। स्कूल के पाठ्यक्रम में पढ़ाई जाने वाली कविताएं बाल मन को बेहद प्रभावित करती हैं। बच्चा बचपन में जो चीजें सीखता है वह उसके साथ जीवन भर चलती हैं। इसलिए स्कूल में पढ़ाई जाने वाली कविताएं बड़ी महत्वपूर्ण है। बच्चे उन चीजों को पकड़ते हैं जो आसानी व सरलता से समझ आती है। सामान्य बात को भी कविता या तुकबंदी से कहा जाता है तो ज्यादा असरदार होती है और लंबे समय तक बच्चों के मन मस्तिष्क में बनी रहती है।

हिंदी प्राध्यापक रविंद्र कुमार बताते हैं कि बच्चों को पढ़ाते समय जब हम कविता को अपनी भावनाओं से जोड़ते हैं तो कविता असर करती है। देश भक्ति की कविता से पहले बच्चों को देश के बारे में बताना पड़ता है। भगत सिंह के बारे में कविता पढ़ानी हो तो देश की गुलामी के बारे में बच्चों से चर्चा की जाती है।

बच्चों को उनके जीवन से जोड़कर व हाव भाव के साथ कविता सुनाते हैं तो बच्चे उसको दिल से आत्मसात करते हैं। कविता का आरोह अवरोह, उतार चढ़ाव, भाव भंगिमा के साथ ही रसानुकूल भी होना चाहिए तभी कविता का बच्चों में गहरे असर होता है। लय ताल के साथ सुनाई गई कविता शरीर में तरंगे उत्पन्न करती हैं।

राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय अराईंपुरा की नौंवी कक्षा की छात्रा व पुस्तकालय संचालन टीम का हिस्सा हिमांशी कहती हैं कि जब उन्होंने पांचवी कक्षा में 'झांसी की रानी' कविता पढ़ी तो मन में आया की पुलिस बनना है। सातवीं कक्षा में पता लगा कि पढ़ लिखकर पुलिस अफसर भी बना जा सकता है। मेरी मां हमेशा मुझे बैंक की नौकरी के लिए प्रेरित करती है लेकिन स्कूल में पढ़ाई गई देश भक्ति की कविताओं से वह इतनी प्रेरित है की पुलिस में जाकर मजबूत लड़की की छवि को गढना चाहती हैं। यह सपना

उन्हें कविताओं से मिला है। हिमांशी ने बताया कि उसके परिवार में लड़कियों को नहीं पढ़ाया जाता। कविताओं से उन्हें हमेशा पढ़ लिख कर आगे बढ़ने की प्रेरणा मिलती है।

नौंवी कक्षा की छात्रा आरती कहती है कि कविताएं पढ़कर जोश आता है और मन करता है कि वह बड़े होकर देश के लिए अच्छा काम करे। आरती कहती है कि उनको स्कूल में स्वच्छता पर पढ़ाई जाने वाली कविताएं व गीत बहुत अच्छे लगते हैं तथा वह स्वच्छता को भी देश भक्ति ही मानती है। यह कहकर वह अपनी मनपसंद कविता गुनगुनाने लगती है।

स्वच्छ रहे यह देश हमारा जहां में यह सबसे न्यारा
मिलजुल कर हम करें सफाई इसी में हम सब की भलाई।

दरअसल स्कूलों में कविताओं का चयन और कविताओं का वाचन बहुत महत्वपूर्ण है। राधा झाड़ू लगाती है और मोहन खाना खाता है जैसी कविताएं भी हैं जो बच्चों में लिंग भेद को बढ़ावा देती हैं। जरूरी नहीं कि बच्चों को युद्ध व सेना की कविताएं पढ़ाई जाएं। देश की नदियां, उसकी फसलें, पौधे मिट्टी से भी देश की गरिमा जुड़ी हैं यह बात बच्चों को बताई जानी चाहिए। यह काम पाठ्यक्रम में अच्छी कविताएं शामिल कर बेहतर तरीके से किया जा सकता है।

आम जन के संघर्षों के साथ खड़ा ग़ज़ल-संग्रह

✍ **अरुण कुमार कैहरबा**

सत्यशोधक फाउंडेशन, कुरुक्षेत्र द्वारा मनजीत भोला का पहला ग़ज़ल संग्रह- 'उजाले हर तरफ होंगे' प्रकाशित हुआ है। भोला के संग्रह में 50 से अधिक ग़ज़लें हैं। ये ग़ज़लें किसान, मजदूर, दलित, वंचित व शोषित वर्गों के जीवन-संघर्षों और आकांक्षाओं को बड़ी संजीदगी के साथ आवाज प्रदान करती हैं। इनमें संवेदनशून्य व क्रूर शासन सत्ताओं से टकराने का साहस मुखर होकर सामने आया है। अहंकार के नशे में चूर सत्ताओं की चालबाजी और खून में रंगे हाथों को भोला साफ-साफ देखते हैं। वे कहते हैं-

नशा उतरे हकूमत का तभी हाकिम कोई समझे
जहाँ तामीर कुरसी है पराई वो इमारत है।
रंगे हैं हाथ जिसके खून से खैरात वो बांटे
कयामत है कयामत है कयामत है कयामत है।

झूठी सरकारी घोषणाओं को भोला आड़े हाथ लेते हैं। वे जिंदगी के लिए रोटी के सवाल को सबसे अहम मानते हैं। यदि लोगों को दो वक्त का मान-सम्मान के साथ भोजन ही नहीं मिला तो फिर सरकारी घोषणाओं से कोई फायदा होने वाला नहीं है-

ये दिया है वो दिया है रोटियां पर हैं कहाँ
घोषणा सरकार की हमको करे बदनाम है।

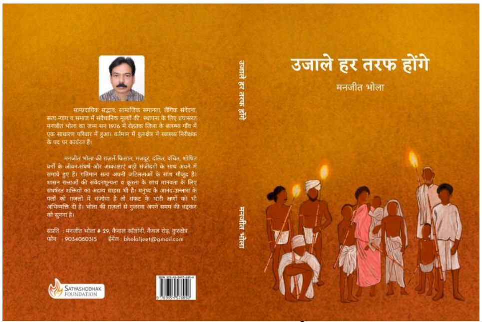

ग़ज़लकार मानवता के लिए संघर्षरत शक्तियों के पक्ष में पूरी मजबूती

से खड़ा होता है। वह श्रम की अहमियत को शिद्दत से पहचानता है और विकास में श्रम और श्रमिकों की योगदान की प्रशंसा करता है। उनकी पक्षधरता में कोई कन्फ्यूजन नहीं है। यह शेर देखिए-

मेरे महबूब यारों से कभी तुमको मिलाऊँगा
कोई रिक्शा चलाता है कोई फसलें उगाता है।

भोला की गज़लों में गरीबी और बेबसी की मार झेल रहे ग्रामीण अंचल के बच्चे यदा-कदा दिखाई देते हैं। उनके पोषण, स्कूलों से दूरी और उनकी जीवन स्थितियों पर वे पूरी संवेदनशीलता के साथ नजर दौड़ाते हैं-

गेट के भीतर नहीं जो जा सके इस्कूल के
आपकी हर योजना उनके लिए बेकाम है।

मजबूरियों और बाल मन को इस शेर में बहुत करीबी से पकड़ा गया है-

खेलने की सिन है जिनकी बोझ ढो सकते नहीं
हाय रे मजबूरियां हल्के गुबारे बेचते।

ग़ज़लकार केवल विभिन्न प्रकार के नामों वाली योजनाएं घोषित करने का प्रचार करने और उनके क्रियान्वयन के प्रति बेरुखी के कारण सरकार को ही कटघरे में नहीं खड़ा करता, बल्कि अच्छी शिक्षा के प्रति ध्यान नहीं देने वाले अभिभावकों पर भी सवाल उठाता है, जोकि अंबेडकर का नाम तो लेते हैं और बच्चों को शिक्षा के लिए बुनियादी सुविधाएं तक नहीं दे सकते-

इक कलम औ कुछ किताबें दे नहीं सकते अगर
झोंपड़ी पे क्यों लिखा है अंबेडकर का नाम है।

भोला की गज़लों में जहां एक तरफ मजदूरों और उनके बच्चों की दशा को दर्शाया गया है, वहीं किसानों के हको-हुकूक के लिए भी आवाज बुलंद की गई है। किसानों की दिन-रात हाड़तोड़ मेहनत से उपजाई हुई फसलों का मोल उसे नहीं मिलता है। उसकी मेहनत की कमाई को कई ताकतें हड़प कर जाती हैं। जो मिट्टी के साथ मिट्टी होकर फसल पैदा करता है, उसकी बजाय बिचौलियों को ज्यादा लाभ मिलता है। यही नहीं, उसकी जमीन पर पूंजीवादी ताकतें और कारपोरेट कंपनियां उसकी जमीन पर गिद्ध दृष्टि लगाए हुए हैं। इन स्थितियों को व्यक्त करते संग्रह की गज़लों के कुछ शेर देखिए-

सूख ना पाए पसीना होट नम होते नहीं
रोटियां उगती हैं कैसे हलधरों से पूछिये।

बचा है क्या मियाँ हलकू तुम्हारे खेत में बाकी

उगाए थे चने तुमने मगर भुनवा चुका हूँ मैं।

शायर पत्रकारों द्वारा अपनी कलम को गिरवी रखने से खासा आक्रोशित है। हमने पत्रकारों को बड़े-बड़े सियासतदानों से सवाल करते हुए देखा है। लेकिन जब पत्रकार अपनी कलम की जिम्मेदारी से बेपरवाह हो जाएं तो शायर किस तरह से पत्रकारों से सवाल पूछता है। इसकी बानगी देखिए-

है कहाँ गिरवी कलम, कुछ ऐ सहाफी तुम कहो
खुदकुशी लिखते कत्ल को क्या गजब अंदाज है।

सच से मुंह मोड़ चुके अखबारों के प्रति आम आदमी के मन में क्या भाव पैदा होता है, यह शेर दिखा रहा है-

और कुछ तो पेश अपनी चल नहीं सकती यहाँ
चाहता है जी लगादूँ आग मैं अखबार में।

मौजूदा दौर के मुख्य धारा के मीडिया से अब उम्मीदें नहीं रखी जा सकती। ऐसे समय में जब घर-घर में चैनल कहर बरपा रहे हैं। ऐसे में शायर की कल्पना पर गौर फरमाईये-

कम-अज-कम वो आदमी तो चैन से होगा यहाँ
जो किसी चैनल किसी अखबार से वाकिफ नहीं।

भोला के गज़ल संग्रह में अनेक स्थानों पर नाजुकता और संवेदनशीलता की प्रतीक तितलियों व चिड़ियों का जिक्र आता है। लेकिन आज के हिंसक दौर में उनके साथ सलूक कैसा होता है। कौन उन्हें कुचलने पर उतारु है। मौजूदा परिवेश की क्रूरताओं को पेश करते कुछ शेर देखिए-

बागबां को डूबकर अब मर ही जाना चाहिए
एक भी तितली नहीं महफूज इस गुलजार में।

कौन चिड़िया गुनगुनाए गीत प्यारे बाग में
हर शज़र पे आजकल बैठा हुआ इक बाज है।

तानपूरे ढ़ोल, तबले बाँसुरी खामोश है
गोलियों की धुन सुनो बंदूक ही अब साज है।

खुद शायर क्या चाहता है, इस शेर से स्पष्ट है-

तितलियाँ बेखौफ जिसमें उड़ सकें
इस तरह आबाद ये गुलजार हो।

संग्रह के कुछ शेर तो ऐतिहासिक बन पड़े हैं, जिनमें एक पूरा फलसफा छिपा हुआ है। इन शेरों को समझने और उनका आनंद उठाने के लिए पाठक को पूरी पृष्ठभूमि से परिचित होना जरूरी है।

बनारस के नसीबों में लिखी फिरदौस की महफिल
मगर जश्र-ए-कज़ा मुर्शिद मेरा मगहर मनाता है।

आजकल हिन्दोस्तां का रूप है बदला हुआ
मर गया गांधी बेचारा, गोडसे जिंदा हुआ।

मेहनतकश को उसका हक ना मिलना सबसे अधिक चिंताजनक है। मेहनत कोई करता है। मेहनत कर-करके मर जाता है। लेकिन उसका श्रेय चालाक लोग लूट ले जाते हैं-

गटर में मर गया रमलू मगर हैरत हुई सुनके
सुना तमगा सफाई का सचिन के नाम होता है।

पानियों के दाम बेशक बढ़ गए हैं देश में
आदमी का खून लेकिन और भी सस्ता हुआ।

संग्रह का शीर्षक गज़ल के जिस शेर से लिया गया है, पहले उसे देखिए-

किया वादा वफा उसने उजाले हर तरफ होंगे
हवा को दे दिया ठेका चरागों की हिफाजत का।

यह शेर हमारी राजनैतिक-सामाजिक व्यवस्था के रहनुमाओं की चालबाजी का पटाक्षेप करता है। वे जो वादा करते हैं, व्यवहार उसके बिल्कुल उलट करते हैं।

संग्रह का शीर्षक पूरी तरह से उपयुक्त एवं सटीक है। शीर्षक पूरे संग्रह की गज़लों का प्रतिनिधित्व करता है, जोकि अंधेरे दौर में उजालों की उम्मीदों को अभिव्यक्त करता है। कटु यथार्थ को बयां करते हुए वे हर वंचित-शोषित तक ज्ञान व अधिकारों के उजाले की उम्मीदों से लबरेज हैं। अपनी ग़ज़लों के जरिये वे एक बेहतर समाज का सपना रचते हैं। वे चाहते हैं- ‘मंदिरी की बात हो ना मस्जिदी की बात हो, मजहबों को भूलकर अब आदमी की बात हो। मुन्सिफों मजलूम की अब एक ही फरियाद है, की गई सदियों तलक उस ज्यादती की बात हो। ’ शीर्षक और विषय-वस्तु के अनुकूल ही युवा कलाकार कीर्ति सैनी द्वारा तैयार किया गया आवरण है। आवरण में मशालें हाथ में लिए किसी बस्ती के महिला-पुरूष और बच्चे दिखाए गए हैं। यह आवरण इतना आकर्षक है कि किसी को भी ग़ज़लें पढ़ने के लिए आमंत्रण देता है।

संपर्क – 9466220145

शिक्षा, संगठन व संघर्ष डॉ. अंबेडकर के विचारों का सार

डॉ. सुभाष चन्द्र

गांव जोहड़ माजरा (इन्द्री) स्थित माता सावित्रीबाई फुले पुस्तकालय व गुरु रविदास मंदिर के प्रांगण में डॉ. भीमराव अंबेडकर सामाजिक शिक्षा मंच के द्वारा बाबा साहब डॉ. अंबेडकर की जयंती धूमधाम से मनाई गई। इस मौके पर डॉ. भीमराव अंबेडकर की वैचारिक विरासत विषय पर आयोजित विचार गोष्ठी में स्वतंत्रता समता बंधुता मिशन भारत के राष्ट्रीय संयोजक प्रो. सुभाष चन्द्र ने मुख्य वक्ता के रूप में विचार व्यक्त किए। विशिष्ट अतिथि के रूप में राजीव गांधी पंचायती राज संगठन के अध्यक्ष डॉ. सुनील पंवार ने शिरकत की। कार्यक्रम की अध्यक्षता शिक्षा मंच के अध्यक्ष कैलाश चंद जास्ट ने की। मंच संचालन हिन्दी प्राध्यापक अरुण कैहरबा व दयाल चंद जास्ट ने किया। कार्यक्रम की शुरूआत संस्कृतिकर्मी सुनील कुमार, प्रवेश व सौरभ ने गुरु रविदास की प्रसिद्ध रचना बेगमपुरा गाकर की।

डॉ. सुभाष चन्द्र ने मुख्य वक्ता के रूप में बोलते हुए कहा कि डॉ. भीमराव अंबेडकर देश-दुनिया के प्रतिष्ठित संस्थानों से अर्थशास्त्र, कानून, समाजशास्त्र, राजनीति विज्ञान सहित कई विषयों में गहन अध्ययन व शोध करते हैं। शूद्र वर्ण व महिलाओं की समानता के अधिकार व न्याय के मार्ग में बाधा बनी वर्ण व्यवस्था का विश्लेषण करते हैं। डॉ. अंबेडकर

महात्मा बुद्ध, संत कबीर व महात्मा ज्योतिबा फुले को अपना गुरु मानते हैं। उनकी वैचारिक विरासत को आगे बढ़ाते हुए समाज में व्याप्त पाखंडों व अंधविश्वासों का पर्दाफाश करते हैं।

प्रो. सुभाष ने कहा कि शिक्षित बनो, संगठित बनो और संघर्ष करो में डॉ. अंबेडकर के विचारों का सार है। हमें यथास्थिति से निकलने और आगे बढ़ने के लिए भाग्यवाद व धार्मिक कर्मकांडों की बेड़ियां तोड़नी होंगी। उन्होंने कहा कि किसी भी समाज को आगे बढऩे के लिए ज्ञान व सत्ता को हासिल करने के लिए संघर्ष करना होगा। उन्होंने कहा कि यूरोप में भी महिलाओं को वोट का अधिकार हासिल करने के लिए कई-कई वर्षों तक संघर्ष करना पड़ा, जबकि भारत में महिलाओं व सभी देशवासियों को डॉ. अंबेडकर ने संविधान में प्रावधान करके सबको मताधिकार दे दिया।

डॉ. सुनील पंवार ने सबसे पहले संविधान की प्रस्तावना का पाठ किया। उन्होंने कहा कि 1947 में जब देश आजाद हुआ तो यहां पर शिक्षा व स्वास्थ्य का स्तर बहुत कमजोर था। महिलाओं की साक्षरता दर आठ प्रतिशत थी। धर्म और जातियों की लड़ाईयां थी। भूख और मृत्यु दर बहुत ज्यादा थी। आजादी के आंदोलन के साथ-साथ हमारे स्वतंत्रता सेनानियों का सपना देश की तस्वीर बदलना था। उन्होंने कहा कि डॉ. अंबेडकर ने संविधान निर्माण में समय की तमाम चुनौतियों का संज्ञान लिया। उन्होंने कहा कि अंबेडकर के विचारों की विरासत को लेकर हमें आगे बढ़ना होगा।

कार्यक्रम में अध्यापक नरेश सैनी, अशोक रंगा, धर्मेन्द्र, सुरेन्द्र दत्त सहित कई वक्ताओं ने संबोधित किया। विद्यार्थी भावना सरोए, आरव, अवनी, प्रीति, रीतिक जास्ट ने सांस्कृतिक प्रस्तुतियां दी। कार्यक्रम में प्रोफेसर सुभाष सैनी की किताब- एक जलती मशाल सत्यशोधक महात्मा फुले का विमोचन किया गया। कार्यक्रम में डॉ. अंबेडकर सामाजिक शिक्षा मंच की तरफ से जोहड़ माजरा के राजकीय स्कूल के प्रतिभावान विद्यार्थियों को सम्मानित किया गया। मंच ने देस हरियाणा से जुड़े धर्मेन्द्र, समाजसेवी वेद प्रकाश कांबोज, धनी राम जैनपुर, डॉ. ईशम सिंह जास्ट, नारायण दत्त, नीरू, पिंकी, पूनम, गुंजन, विभिन्न स्कूलों के अध्यापक महिन्द्र खेड़ा, सुभाष लांबा, नरेश सैनी, जसविन्द्र पटहेड़ा, मान सिंह चंदेल, नीटू बुढऩपुर, केहर सिंह, सेवानिवृत्त अध्यापक लालचंद, समाजसेवी अशोक रंगा व प्रशांत को स्मृति चिह्न देकर सम्मानित किया गया। कार्यक्रम के आयोजन में सामाजिक शिक्षा मंच के कोषाध्यक्ष बलदेव सिंह, सचिव व पंचायत सदस्य रामफल डोडे, संयुक्त सचिव संजीव कुमार, सांस्कृतिक सचिव सुनील कुमार, सौरभ, विवेक जास्ट व राहुल व वंदना का योगदान रहा। दयाल चंद जास्ट ने शिक्षा मंच की तरफ से सभी का आभार जताया।

अरुण कैहरबा

देस हरियाणा प्राप्त करने के लिए संपर्क करें

कुरुक्षेत्र	-	विकास साल्याण	9050182156
	-	योगेश शर्मा	9896957994
यमुनानगर	-	बी मदन मोहन	9416226930
अंबाला शहर	-	जयपाल	9466610508
करनाल	-	अरुण कैहरबा	9466220145
इंद्री	-	दयालचंद जास्ट	9466220146
घरौंडा	-	राधेश्याम भारतीय	9315382236
	-	नरेश सैनी	9896207547
कैथल	-	कुलदीप	9729682692
जीन्द	-	मंगतराम शास्त्री	9416513872
टोहाना	-	बलवान सिंह	9466480812
नरवाना	-	सुरेश कुमार	9416232339
सोनीपत	-	विरेंद्र वीरू	9467668743
पानीपत	-	दीपचंद निर्मोही	9813632105
पंचकुला	-	सुरेंद्र पाल सिंह	9872890401
	-	जगदीश चन्द्र	9316120057
रोहतक	-	अविनाश सैनी	9416233992
	-	अमन वासिष्ठ	9729482329
भिवानी	-	का. ओमप्रकाश	9992702563
दादरी	-	नवरत्न पांडेय	9896224471
सिरसा	-	परमानंद शास्त्री	9416921622
	-	राजेश कासनिया	9468183394
हिसार	-	राजकुमार जांगड़ा	9416509374
महेन्द्रगढ़	-	अमित मनोज	9416907290
मेवात	-	सिद्दीक अहमद मेव	9813800164
शिमला	-	एस आर हरनोट	01772625092
	-	रितिका	9810171896
राजस्थान (परलीका)	-	विनोद स्वामी	8949012494
चंडीगढ़	-	ब्रजपाल	9996460447
	-	पंजाब बुक सेंटर, सैक्टर 22	
दिल्ली	-	संजना तिवारी , नजदीक श्रीराम सेंटर,	
	-	आरके मैगजीन , मौरिस नगर, थाने के सामने	
	-	एनएसडी बुक शॉप	
ई-प्राप्ति	-	www.notnul.lcom/desharyana	